भारत सरकार द्वारा सैनिको के लिये स्वीकृत

# पपीहा

( जीवन में युगान्तर उपस्थित
करने वाली कहानियां )

श्री गुलाबरत्न वाजपेयी "गुलाब"

---

दूसरा युद्ध संस्करण ]

[ मूल्य २॥)

# मैं लिखता हूं—

इसलिये कि मैं दर्दोंसे भरा हूं। मेरा जीवन क्रांतियोंका कुरुक्षेत्र है!

"पपीहा" भी संघर्षोंका शिकार है। मैं हरी जमीनका सूखा दरख्त हू—"पपीहा" मेरी उजडी डालोंका घायल पक्षी!

उसकी पुकारें कान खोलकर सुनो और दुनियाको खुली आखोंसे देखो। यहाके चलते-फिरते मनुष्य रहस्योंके पुतले हैं। उनके चरित्र निर्माणपर ध्यान दो और जीवन-मजिलपर होशियारीके साथ आगे कदम बढाओ। रास्तेमें मुसीबतोंके भयानक तूफान हैं। जहा तुम धोखा खा गये, या तो लड़खड़ा कर खाई खन्दकमें गिर पडोगे या काटे चुभ कर तुम्हारी शक्तिया बरबाद कर डालेंगे।

एक मित्रके नाते मैं तुम्हे ससारका सबसे बुद्धिमान व्यक्ति समझता हू! मेरे इशारे समझो और "पपीहा" की कहानियोंमें अपने जीवनका खजाना ढूढो। यदि तुम्हे इसमे एक भी कीमती मोती मिल गया तो मैं अपना परिश्रम सफल समझूगा।

सहयोगमे अमृतके स्वादका आनन्द है। जो लोग मेरी पुस्तकें पढते हैं, मैं उनका मनोवैज्ञानिक सेवक हू।

'विज्ञान मन्दिर'
वसन्त ऋतु
स० २००१

—:*:—

कहानिया

पृष्ठ :—

पपीहा—

# जिन्दगी जीनेके लिये है

—:○:—

गरीब, बेकार और प्रेमी प्रेमिकाओंकी आत्महत्याकी खबरे पढते पढते मैं तङ्ग आ गया। सोचने लगा—इन्सान आत्महत्या क्यों करता है। क्या यह मनुष्योंकी बेवकूफी और मुर्दादिली नहीं है? जिन्दगी जीनेके लिये है, मरनेके लिये नही। इन मूर्खोंको इस पापके दलदलसे कैसे निकाला जाय? इस मर्जकी दवा क्या है?

मै हफ्तों और महीनों इस बीमारीका इलाज करता रहा। कोई तरकीब न भिड़ी। अन्तमे अखबारोंमे मैंने नीचे लिखा विज्ञापन छपवाया —

"जरूरत है—कुछ ऐसे स्त्री पुरुषोंकी, जो आत्महत्या करना चाहते हो। जिन्हे जिन्दगीसे नफरत हो गयी हो। पत्रपर ध्यान न दिया जायगा। सुबह ९ से ११ तक खुद मिलनेको कृपा करे।"

तीसरे दिन मेरे मकानके सामने औरत, मर्द मक्खियोंकी तरह भनभना रहे थे। मैंने एक एककर सबका इण्टरव्यू लेना शुरू किया। मिलनेवालोंमे कुछ परले सिरेके लफंगे और उठाईगीरे थे। कुछ भिखमगे, मजदूर कुली-कबाड़ियोंका दल था। लेकिन बातोंके सिलसिलेमे मैं ताड गया कि उनमे ज्यादातर झूठ बोलनेवाले और चकमेबाज हैं। मैंने सबको बिदाकर तीन व्यक्ति ऐसे चुने, जो वास्तवमे आत्महत्या करना चाहते थे। जिन्हे जीवनसे

घृणा हो गयी थी। इनमे एक था सत्तर वर्षका जर्जर बूढा, दूसरा अधखिला जवान, तीसरी एक नवयुवती।

इस त्रिपुटीकी जीवन कहानिया सुनकर मैं काप उठा!

बूढेने कहा—"मेरा नाम गिरधारीलाल है। मैं सेठ और लखपती आदमी हू। लेकिन मेरे आगे-पीछे कोई अपना नही। मुझे हिस्टीरिया की बीमारी है। जब इस रोगका दौरा शुरु होता है, मेरा मगज राचीका पागलखाना बन जाता है। आदमियोकी फटी सूरते देखकर हसता हू। औरतोको बिसातखानेकी दूकान समझकर घण्टो घूरता हू और सडक को नदी समझकर भागता हू बडी दूर, गोया वह मुझे अपनी गोदमें छुपा लेगी। क्या यह कम मुसीबत है? दुनियामे मेरे जैसा सनकी और बेवकूफ कौन होगा? मेरे पास धन है, लेकिन मैं उसे मिट्टी समझता हू। इज्जत है, लेकिन मेरे लिये इसकी कीमत खण्डहरसे ज्यादा नही। क्या आपके पास थोडी सी सखिया है? दे दीजिये। जिन्दगीको फुटबाल बनाकर उडा दू।"

नवयुवक बोला—"मैं मैट्रिक फेल रमेश हू। मेरे पिता एक मशहूर बैंकमे क्लर्की करते है। तनख्वाह है बत्तीस रुपये माहवार। एक दर्जन भाई बहेन हैं। परिवारका खर्च मुश्किलसे चलता है। लगभग दो सालसे परेशान हूँ। मुझे दस रूपयेकी भी नौकरी नही मिलती। जहा जाता हू। कोई सीधे मुह बात नहीं करता। अपमान, बेइज्जती और मुसीबतोसे तग आकर इच्छा हुई, अमीरोकी तोंदमे छुरी पेल दू। रूपयेवालोके खिलाफ विद्रोह करू, बैंकोपर धावे मारू और बाजारोको लूटू। लेकिन यह सब खयाली पुलाव थे। आत्माने आगे न बढने दिया। महीनोसे फटी हालत

में घूमता हूं। क्या आप कोई छोटी-मोटी नौकरी देंगे? यदि बुझते दीपककी यह भी आशा पूरी न हुई तो मैं आज शामको रेलकी नीचे कट मरूंगा। उस समय मेरी फटी जेवसे पुलिस एक पत्र बरामद करेगी। जिसमें लिखा होगा—ऐ गरीवो! तुम दुनियाके अमीरोंको चुनचुनकर मारो। ये खून पीनेवाले चकमेवाज है। मैंने इन्होंके ठुकरानेसे आत्महत्याकी है।"

खूबसूरत नवयुवती बोली—"मैं बाजारू वेश्या प्रतिभा हू। इस बीस वर्षकी हिन्दू विधवाने सरेबाजार बैठकर गोमास खानेवाले राक्षसोंके साथ व्यभिचार किया है। कोढियोंको दूधके फेन जैसी सेजपर सुलाया है। इसी छोटी उम्रमे मैं मनों शराव-कवाब गलेके नीचे उतार गयी हू। क्या यह भी कोई जिन्दगी है? इससे तो पनालेके कीडे अच्छे। मैं ऊपरसे फूल जैसी खिली हू, लेकिन मेरे दिलमे चितायें जल रही है। यदि आप दार्शनिक हैं तो देखेंगे, उनकी लपटोमे आहोका नशा है, शापका जहरीला धुआ है और है विद्रोहके अङ्गारे! मैं न सुख चाहती हू, न वैभव। मुझे चाहिये मनुष्य-जीवन, शान्ति और पवित्र प्रेम। यदि मुझे यह न मिलेगा, तो एक दिन अफीम खाकर चौमजिले मकानसे कूद पडूगी। उस समय सड़ककी भीड मेरी लाशको देखेगी,—हिन्दू समाजके सर्वनाशी वेषमे!"

मैंने कहा—"आप लोगोंकी सनसनी खेज कहानिया सुनकर मुझे कोई आश्चर्य नहीं हुआ। आपके जैसे अभागे आज हिन्दुस्तानमे हजारोंकी तादादमें मिलेंगे। लेकिन मेरे दिलके टुकडो! जिन्दगी जीनेके लिये है, मरनेके लिये नहीं। मैं आपलोगोंको एक साथ, एक काम सौंपता हू। आशा है, आपको उससे वड़ी दिलचस्पी होगी। और· !"

बात काटकर रमेशने पूछा—"वह क्या है ?"

मैंने कहा—"यू० पी० मे एक शहर है लखनऊ। शायद आपलोगोंने उनका नाम सुना होगा।"

तीनों एक साथ ही बोल उठे—"जी हा।"

मैंने कहा—"इतिहासमे लखनऊकी नजाकत मशहूर है। सुना है, वहा एकसे एक आला नवाब हो गये है। आज भी उनकी झलकके टुकडे पाये जाते है। आपलोग लखनऊ जाकर, वहाके औरत, मर्दोंकी रिपोर्ट लिखकर मेरे पास ले आये। ' क्या वहाके सभी आदमी नवाब और नजाकतके पुतले है ? हर आदमियोके चेहरे ताड़िये और नोटबुकमे दर्ज करते जाइये,—कितने आदमियोंके चेहरे सुर्ख, खुशमिजाज और सफलताओंसे भरे पूरे है ? सडियल, अभागे और आप जैसे—असफल जीवन वहा कितने है ?—यह रिपोर्ट आपलोगोंको एक महीनेमे खत्मकर देनी होगी। परीक्षा कितने लोगोंकी की जायगी, इसकी कोई तादाद नही। आप जितने ज्यादा चेहरे ताड सकेंगे, उतना ही फायदा होगा। जाइये, इस समय आराम करें। सिनेमा देखे, कौव्वालिया सुनें, बाग बगीचोंकी सैर करे और जिसमे आपको ज्यादा मजा आये, उन बातोंमे मशगूल रहे। इस बाबत मैं आपको पाच सौ रूपये देता हू। रिपोर्ट पाजाने के बाद मैं आपकी तमाम तकलीफे दूर करने की कोशिश करूगा और आपको जीवन धारण करनेके सरल, सुन्दर और दिलचस्प तरीके बताऊगा। क्या आपलोग मेरा प्रस्ताव मजूर करते हैं ?"

रमेश और प्रतिभाने तो अपनी मजूरी दे दी। लेकिन बूढा बिगड गया और मूछोंपर ताव देकर बोला—"मै आपके रुपयोका भूखा नहीं हू।

इस तरहके हजारों रुपये मेरी तिजोरीमे चमक रहे हैं। हा, आपके कामसे मुझे बडी दिलचस्पी होगी। और मैं सबसे ज्यादा आदमियोंके चेहरे ताड सकूंगा। लेकिन बाबू साहब! यह तो बताइये मेरी हिस्टीरिया का क्या होगा? यदि आप इसके मार भगानेका कोई प्रबन्ध न कर देंगे तो मैं जहर खालूंगा।"

मैंने कहा—"लखनऊकी हवामे वसन्तकी बहारें हैं। वहा दुश्मनोंमे भी मजा है, दोस्तीमे भी। भाषामे बुलबुले चहकती है। मेरा काम दिलचस्पीसे करते ही आपकी हिस्टीरिया दूर हो जायगी। सपनेमे भी फिक्र न कीजिये। सोचिये, 'हिस्टीरिया' मुझे कभी नहीं हुई। देखिये जादूसा असर होगा। मिस्टर रमेश!—और प्रतिभा देवी! आप पुरानी बातोंका खयाल तक न करें। आजसे आपलोगोंकी नई जिन्दगी शुरू होती है। यदि आप मेरा काम मन लगाकर करेंगे, तो दिमाग फूलकी तरह खिल उठेगा। दुनिया नये रङ्गोंसे भर जायगी और जिस जीवनसे आप घृणा कर रहे हैं, उसे प्यार करनेकी तबीयत होगी।

तीनों आत्महत्या कारियोंने मेरी बात मजूरकी और मैंने उसी दिन पाच सौ रुपये देकर उन्हे लखनऊ रवानाकर दिया।

( २ )

कुछ दिन चैनसे कटे!

दिनपर दिन, हफ्तेपर हफ्ते रङ्गीन सपनोंकी तरह आये और चले गये। पोस्टमैनोंकी राह देखते देखते आखे पथरा गयीं। पर आत्महत्या करने वालोंने न तो लखनऊसे कोई रिपोर्ट भेजी, न चिट्ठीपत्री। मै इस फिक्रमें

पड गया—मामला क्या है ? क्या उनलोगोने मुझे धोखा दिया ? क्या मेरे पाच सौ रुपये पानीमे बह गये ? विश्वास तो नहीं होता !

एक दिन तडके सुबहकी चाय पीकर मैं सूखे दिलसे समाचारपत्र पढ रहा था। एकाएम पोस्टमैनने आकर एक लम्बासा पीला लिफाफा दिया। मैंने बेचैनीके साथ पढा। लिखा था.—

"मान्यवर महोदय !

आपको बहुत दिनो बाद खत लिख रहा हू। उम्मीद है, आप नाराज न होंगे। क्या करू ?—कुछ सवाल ही ऐसे पेचीदे आ पडे थे।

आपके डायरेक्सनने हमारी मानसिक शक्तियोपर गहरा असर डाला। हम तीनोने पाच-सात दिनो तक तो आपका काम दिलचस्पीसे किया ! लेकिन बादमे वह इतना नीरस मालम होने लगा कि हम उसे छोडकर मौज मस्तियोमे मशगूल हो गये। यहा मैंने ईदको खुशिया देखी। चाँद जैसी सूरतोंपर हमारे दिल लट्टू हो गये। खूब रस रगोमें डूबे, चुनचुनकर मजे उडाये। साराश यह कि आपके रुपयोसे हमलोगोने काफी नवाबी की।

उन्ही दिनो एक सुन्दर घटना घटी। याने प्रतिभाके साथ मिस्टर रमेशका प्रेम हो गया। और एक दिन उनलोगोने मेरी नजर बचाकर आर्य समाज मदिरमे शादी करली। जब मैंने उन्हे वर-दुलहिनके रूपमे देखा, तो निहायत खुशी हुई और मैंने लगभग दो हजार रुपये खर्च कर एक शान-दार पार्टी दी। इस जलसेमे लखनऊके राजा रईस, पत्रकार, शायर और कितने ही आला दिमाग शामिल थे

यहा आकर मैंने कोई दवा-दारू नहीं की। आपकी बताई हुई भावनायें

मेरे दिमागमे सनसनाती रहीं। नतीजा यह निकला कि मैं एक दम भला चङ्गा हो गया। हवा-पानी तो यहाकी इतनी मस्तानी है कि बूढ़े से जवान बन रहा हू और बदनमे सुर्खी पैदा हो रही है।

मैं दुनियामे अकेला हू। इसलिये मैंने रमेशको गोद ले लिया है और अपनी सारी जायदाद उसके नाम लिख दी है। परमात्मा करे यह युगल जोडी सुखी रहे। जब मैं इन दोनोको एक साथ तितली भवरेकी तरह देखता हू, तो मारे खुशीके फूल जैसा खिल उठता हू।

अब हमलोग लखनऊसे दिल्ली आ गये हैं। यहा से काश्मीर जायेंगे और कुछ दिन वहाका आनन्द लेकर आपकी सेवामे हाजिर होगे। आशा है, आप अपनी चरणधूलि देकर हमे कृतार्थ करेंगे। आपकी ही दयासे हमें नयी जिन्दगी मिली और हम आत्महत्या जैसे महापापसे बच गये।

अब तो ससार भी बडा सुन्दर दिखाई देता है। जीवनको प्यार करनेकी इच्छा होती है और सवेरा होते ही हम परमात्मासे दीर्घ जीवन पाने की प्रार्थना करते है।

कृपया रमेश और प्रतिभाका अभिनन्दन स्वीकार कीजिए। अधिक मिलनेपर—

स्नेहपात्र—

"सेठ गिरिधारी लाल।"

मैंने पत्र लपेटकर पाकेटमें रख लिया। और सोचने लगा—मनुष्य जीवन कितना मधुर और सुन्दर है। जो इसकी फिलासफीको समझता है, वह वास्तवमे देवता है। जो इसे ठुकराता है वह नर्कका कीड़ा है। परमात्मा! तू हर मनुष्यको सुबुद्धि दे—जीवन जीनेके लिये है, मरनेके लिये नहीं।

# सावन की रात

——:——

राजा पृथ्वीपालकी विलासिता इस तेजीके साथ बढने लगी कि वह महारानी अञ्जनाको भूल गये। उनकी आखोमे रात दिन आनन्द नृत्य किया करता राजनटी मीराका रुप सौन्दर्य। उनके हृदय-सागरमे रात दिन हिलोरें लिया करती मीराके उन्मत्त प्रेमको उत्ताल तरगे। वह सोते समय मीराके रङ्गीन स्वप्न देखते, जागते समय मीराकी कल्पना करते। मीरा उनके रोम रोममे शराबके नशेकी तरह समागई थी।

दरअसल मीरामे रतिकी सौन्दर्यछटा थी। फूलोमें वह कोमलता कहा, जो मीरामे थी। ऊपामे वह लाली कहा, जिसे मीराने प्राप्त किया था। वह जिस समय सोलह शृङ्गारकर राजदरवारमे नाचती, लोग चित्र लिखित जैसे रह जाते। उसकी देहलताका आकर्षण, रुप सौन्दर्यका जादू, आखोका तीखा कटाक्ष—हर आदमिको अपनी ओर खीच लेनेके लिये काफी था।

राजकवि मधुप भावुकतामे मत्त होकर सरस कविताये पढते और राजनटी मीरा कविके शब्दोंपर आनन्द नृत्य करती। राजा पृथ्वीपाल इसी मस्तीमें वसन्तकी वहारें लूटते। वरसातकी मस्तानी छटाओमे मयूर वनकर किलोलें करते। कितने ही दिन बीते, कितनी ही राते। उनका यह आनन्द पूर्णमासीके चादकी तरह पूरा होने लगा।

एक दिन नगरमे ढिढोरा पीटा गया—"आगामी नागपञ्चमीको राज

दरवारमे 'सावनकी रात' का जलसा मनाया जायगा। यह इतना प्यारा और अनोखा होगा कि आज तक किसीने इतना सुन्दर उत्सव न देखा होगा। इस जलसेमे राजकोषसे लम्बी रकम खर्चकी जायगी। कवि मधुप घटा वनकर छायेंगे और उनकी कविताके छन्दोमे राजनटी मीरा मयूरी वनकर आनन्द नृत्य करेगी। महाराजका हुक्म है, उस दिन सव लोग ठाटवाटके साथ राज दरवारमे हाजिर हो।"

चारो तरफ तहलका मच गया। लोग खुशीसे उछल पडे। जलसेके लिये धूमधामसे तैयारियाकी जाने लगी। अमीरोने दिल खोलकर नई पोशाकोके आर्डर दिये, गरीव कर्ज ले ले कर साजोसामान इकट्ठे करने लगे। इत्र फुलेल तो इस लम्बी तादादमे खरीदा गया, कि दूकानदार मालोमाल हो गये। नई और फैशनकी एक भी चीज न रह गयी!

( २ )

आज जहा चारो ओर आनन्दका वागीचा लहरा रहा था, वहा एक अवखिली कली मुरझा रही थी। आज जहा लोगोंके दिल-दरिया वन चुके थे, वहा एक दिलमे उदासीका तूफान चल रहा था।

यह कौन थी?—महारानी अजना!

रातका भयानक सन्नाटा, वह विस्तरपर लेटी हुई आकाशके तारे गिन रही थीं। चाद चमक रहा था, पर उनके दिलमे अन्धेरी घिरी थी। वागीचेमे फूलोके झुण्ड अठखेलियाकर रहे थे, पर उनका दिल नुकीले काटोसे चलनी वन रहा था। वह इस समय पृथ्वीमण्डलकी एक निस्तेज आभा थीं। उनका हृदय भूकम्पकी तरह हिल रहा था। शरीरके अन्दर पीडा थी-

आहें, जैसे उन्हें हजारों विच्छुओंने डस लिया हो। कैसी रहस्यमय थी सावनकी रात। किसीके लिये मदिराकी प्याली! किसीके लिये जहरका प्याला!

यह कोमल-कुसुम राजनटी मीराके हाथोंसे मसला गया। उसके हो रूप-सौन्दर्यपर मुग्ध होकर राजा पृथ्वीपाल अजनाको भूल गये थे।

तडप-तडपकर रात कटी। सवेरा होते ही महारानीने कवि मधुपको अपने पास बुलवाया। मधुप हाथ जोड़कर खड़ा हो गया। उसकी भावुक आखोंने देखा—महारानी अजना चिन्तासे सूखकर काटा हो गयी है। उनका मन हाहाकार और वेदनाओंका श्मशान है। कवि चौंकउठा—"यह मैं क्या देख रहा हू?"

महारानी अजना बोलीं—"कवि! कुछ नहीं, तुम ठुकराये प्रेमका अपमानित रूप देख रहे हो। मैंने सुना है, नागपञ्चमीके दिन दरवारमें सावनकी रातका उत्सव मनाया जायगा। उसमें तुम मधुर स्वरसे कविता पढोगे और राजनटी मीरा तुम्हारे बरसातो शब्दोंपर मयूर नृत्य करेगी। क्या यह सच है?"

"जी हा!"—कविने आदरसे मस्तक झुकाकर कहा—"मैंने कविता लिख ली है। बडी मधुर है, झनकारों और सौन्दर्यसे भरी हुई।"

"तुम वह कविता न सुना सकोगे।" महारानीने कहा—"उस समय तुम्हारी सारी शक्ति लुप्त हो जायगी।"

कवि—"क्यों?"

महारानी—"आज तुमने ठुकराये प्रेमका असली रूप देखा है, मेरे

पीड़ित कष्टोंके दर्शन किये है। मेरी वेदना तुम्हारी शक्तियोको चूरचूरकर देगी।"

कवि—"यह कैसे महारानी जी ?"

महारानी—"जो दर्द कविके प्राणोमे होता है, वह दुनियाके दूसरे आदमियोंमे नहीं। कवि मधुप अपनी महारानीको दुखी देखकर घायल सिहकी तरह चीख उठा होगा।"

"सच है"—कविने मर्माहित होकर कहा—"आपको देखकर मेरी छाती फट गयी है। सारे बदनमे कपकपीका हमला हुआ है—मैं सचमुच अपनी कविता न सुना सकूगा।"

"ऐसा ही हो।"—महारानी अञ्जनाने कापती आवाजमें कहा—"कवि ! जानते हो, राजनटी मीराने किस तरह मेरी चादनी रातमे राहु बनकर प्रवेश किया है ? क्या तुम जानते हो, उसने किस तरह मेरे मनुष्य जीवनके सारे सुख बरबाद कर डाले है ?"

"जानता हू।"—कवि दीर्घ निस्वास लेकर बोला—"मेरी जीवन पुस्तक मे आपकी कष्ट कहानियां बिजलीकी कलमसे लिखी गई हैं।"

"कवि !"—महारानी वेदना भरे स्वरमे बोली—"तुम मेरे हाहाकरोको लेकर एक दर्द भरो कविता लिखो। उसमे मेरी आहे प्रज्वलित-चिताकी तरह धाय धाय कर जल उठे, मेरी पीडाओका आर्तनाद हो, मेरे कण्ठोके आसू बहते दिखाई दें।"

"इससे भी अधिक मेरी कवितासे चिनगारिया फैलेंगी"—कवि प्रणामकर जाने लगा।

महारानीने कहा—"कवि सुनो ! मैं तुम्हे इसलिये कष्ट देती हूं कि तुम एक मृत आत्माका उद्धार कर सकोगे। तुम्हारी वाणी महाराजके कानोंमें हलचल मचा देगी। उत्सवके दिन तुम यही कविता दरबारमे पढना। नाराज तो नहीं हो ?"

कविने कहा—"जिन आखोंने आज आपके दर्शन किये हैं, वह आखें आसुओंसे डबडबा रही हैं। जिस प्राणके सारे रस सूखकर रेगिस्तान बन गये है, सारा सौन्दर्य नष्ट हो गया है, सारी शक्ति काफूरकी तरह उड गयी हैं—उन प्राणोमें आपके प्रति नाराजगी नही, सच्ची हमदर्दी है। इच्छा होती है। आज मैं भी आप ही की तरह किसी निर्जन स्थानमे बैठकर आसू बहाऊ। मुझे कोई न देखे, कोई न पहचाने।"

"धन्य हो"—महारानी बोली—"कविके सिवा और कौन दुखियाके प्रति सहानुभूति रख सकता है ? ससार अपने कार्योंमे व्यस्त है, किसीको नजर उठाकर देखने तककी फुरसत नही।"

कविने महारानीके चरणोमे प्रणाम किया और अर्द्ध मृतक रोगीकी तरह धीर पदोंसे कमरेके बाहर हो गया।

रास्तेके चलते फिरते मनुष्योंने देखा—भीडमें एक आदमी चला जा रहा है। उसकी सूरत वर्षोंके बीमार रोगीकी तरह है। पैर इस तरह लडखडा रहे है मानो गिर पडेगा और उसकी हालत मुर्दा जैसी हो जायगी।

( ३ )

नागपञ्चमी आ गयी। उत्सव-कोलाहलसे सारा नगर भर गया। मानो साक्षात मावन देवता राजा पृथ्वीपालके अतिथि है। आजकी रात उनके विशेष स्वागत सत्कारमे व्यतीत की जायगी।

राज दरबारमें तिल रखनेकी जगह न थी। लोग प्रसन्न होकर आपसमें कानाफूसी कर रहे थे। कहीं आनन्दकी हिलोरें आ रही थीं, कहीं हंसीके फौआरोंकी झड़िया थीं।

राजा थे, रानी पर्देकी ओटमें उदास बैठी थीं।

मीरा थी—पर मधुप गायब था!

राजाने सिंहासनपर बैठे-बैठे जबान हिलाई—"अब शुरू होना चाहिये। जल्सा। कवि कहां है?"

हजारों आखोंने कविको एक साथ ढूंढना शुरू किया। दरबारमें कविकी छायातक न थी।

लोग दौड़े कविकी पर्णकुटीरकी ओर। कवि दरबारमें आनेके लिये घरसे निकल रहा था।

लोग सर आखोंपर चढाकर उसे दरबारमें ले आये। नया उत्सव दौड़ गया—दरबारियोंके चेहरे खिल उठे।

राजा पृथ्वीपाल बोले—"कवि! अपनी सरस कविताओंसे दरबारको मतवाला बना दो। तुम्हारी कवितासे झूमने लगें हजारों मानवके मन! नाचने लगे प्यारकी रूप-सी मीरा! वह चले आनन्दकी पागल—हिलोरें!!!"

कविने रङ्गमञ्चपर आकर कविता पढनी शुरू की। लोग आश्चर्य चकित रह गये। सबकी आँखें आसुओंसे तर हो गयी। मीराका मुंह सूख गया। सावनकी रात सबके लिये फीकी साबित हुई—नीरस और उजाड़!!!

पृथ्वीपाल गुस्सेसे कांपने लगे। कठोर शब्दोंमें बोले—"कवि! आज तुमने मेरा अपमान किया है। फूलकी जगह तुमने पत्थर बरसा दिये। निकल जाओ दरबारसे, आजसे मैं तुम्हारा मुंह न देखूंगा।"—कवि जाने

लगा। राजा महलमें चले गये। सावनकी रात विरहिनीके दिलकी तरह सूनी हो गयी।

( ४ )

भयानक अन्धकार था। पानी कहता था, मैं बरसके ही दम लूंगा। मीरा भीगती हुई अभिसारिकाकी तरह कविके घर पहुची।

आश्चर्यसे कविने पूछा—"इस आफतके समय यहा कैसे ?"

मीरा—"कल फिर सावनकी रातका उत्सव मनाया जायगा।"

कवि—"तो मैं क्या करू ?"

मीरा—"मेरे लायक मधुर कविता लिखो। तुम्हारे शब्द घटा बनकर हृदयाकाशमे छायेंगे, मैं मुग्ध होकर मयूर नृत्य करूगी।"

"असम्भव है मीरा!"—कविने कहा—"मैं राज दरबारसे निकाल दिया गया हू। अपमानसे मेरे बदनमे आग लग गयी है। मरकर भी वहा न जाऊगा।"

"निकाल दिये गये हो ?"—मीरा बोली—"किन्तु तुम्हारी कविताओसे समस्त दरबारियोके हृदय झकृत हो रहे है। मैं तुम्हारी कविताके बिना क्षण भर भी न जीऊगी।"

कविका दिल टुकडे-टुकडे हो गया। उसने कहा—"मीरा! तुम फिजूल कोशिश कर रही हो। मेरी जिन्दगी बदल गयी है। अब मेरी कविताओमे दिल नहीं, दर्द मिलेगा। प्रेम नही, उनमे हाहाकारके शोले भडकते दिखाई देंगे।"

मीरा—"तब ? मेरी विजयका उपाय ?"

कवि—"कुछ नहीं। झूठी मायामें फसकर संसारको मत ठगों। कञ्चन शरीर और रूप-यौवन मिट्टीके खिलौने हैं। हाथमें इकतारा लो और राम भजन करो। यही मुक्ति है, मनुष्य जीवनकी विजय है।"

मीराके हृदयमें तीरकी तरह चुभ गये कविके ये शब्द। वह सोचने लगी—क्या सचमुच ससारका इतना सुन्दर रूप मिट्टी है? क्या सङ्गीतमें कोई सार नहीं? नृत्यमें कोई लालित्य नहीं? सब मिथ्या है?—

एकाएक उसकी दिलकी रोशनी बुझ गयी। समस्त ससारका अन्धकार उसके मानसमें समा गया गया। कातर स्वरमें बोली—"कवि! तुम्हारी वाणी अमर हो। आज तुमने मेरे मानस नेत्र खोल दिये। व्यर्थ है रूप-सौन्दर्यका जादू!—मिट्टी है ससार, वृथा हैं यहाके आनन्द!—तुमने मुझे ईश्वरसे मिला दिया। नाचकर उन्हींको रिझाऊगी। उनके ही प्रेमकी दीवानी बनूगी। लाओ, मुझे अपनी कविता दो।"

कविने कविता दे दी।

मीरा उसे पढकर हर्षसे नाचने लगी।

कविने कहा—"राजनटी! जीवनमें मैंने जिस सत्यको पाया है, वह तुम्हे देता हू। ले जाओ इसे। सावनकी रातके उत्सवमे यही गीत गाना और इसके शब्द-शब्दपर नाचना। इससे राजाकी मोह-निद्रा टूटेगी और तुम इसे गाते हुए सत्यमार्गकी ओर कदम बढाना। उस सत्यमार्गकी ओर, जिसमें मनुष्यके कष्टोंके साथ सग्राम कर जीवनके अनन्त सुखोंके दर्शन किये है।"

मीराने कविके चरणोंमे मस्तक झुकाया और घर चल दी।

( ५ )

आज राज दरबारमे सावनकी रातका दूसरा उत्सव था। जनताका वैसा

ही जमाव । वैसी ही चहल पहल, वैसा ही राग-रङ्ग । राजा पृथ्वीपाल सिंहा-सनपर विराजमान थे । सिर्फ वहा न थी महारानी अञ्जना और राजनटी मीरा।

पृथ्वीपालने क्रुद्ध होकर दरबारमें मीराको हाजिर होनेका हुक्म सुनाया ।

मीरा आई । आज वह गेरुआ वस्त्र धारण किये थी । सिरके बाल बिखर रह थे । गलेमें रुद्राक्षकी माला थी और हाथमे इकतारा ।

गुस्सेसे तमतमाकर राजाने पूछा—"मीरा ! आज यह फकीरी वेष क्यो ?"

"अपराध क्षमा कीजिये राजन् !" —मीराने कहा—"मुझे ससारसे घृणा हो गयी है । तुच्छ है पृथ्वीमण्डलका सौंदर्य ! तुच्छ है विलास-वैभवकी माया-जाल ! मैं हरिनामकी प्रेमिका हू ।"

राजाके मुहसे एक हल्की चीख निकल गयी—"हरिनामकी प्रेमिका ।"

मीराने कहा—"जी हा, ससारमे हरिनाम ही सत्य है, बाकी सब मिथ्या, -मायाजाल !"

राजा—"तो क्या आजके सावनको रातका उत्सव फीका हो जायगा ? क्या तुम मयूर नृत्य न करोगी ?"

"मयूर नृत्य अवश्य करूगी"—मीराने उत्साह भरे शब्दोंमे कहा—"अपने नृत्य सगीतसे दरबारमें आनन्दकी लहरे बहा दूगी ।"

राजाने सङ्गीत विशारदोंको हुक्म दिया—"बजने दो उत्सवके वाद्य । बह जाने दो मीराके नृत्य गानोंमे दरबारियोंके उन्मत्त यौवन । मीरा ! राज-नटी ! गाओ, आज वह सुरीला सगीत गाओ—जिसे वनोंमें कोकिल अलाप रहे हैं । कुञ्जोंमे फूल गा रहे है !"

मीराने रङ्गमञ्चपर आकर गाना शुरू किया। गानेकी प्रत्येक तालपर उसके अङ्ग-प्रत्यङ्ग थिरकने लगे। वह गीत क्या था—वैराग्यका तूफान था। उसमें दुनियाके प्रति घृणा थी। दुखी दिलका चित्कार और हरिनामका प्यार था। इस गीतसे दरवारियोंके प्राण रोने लगे। पृथ्वीपाल सन्न रह गये। कलेजा धडक उठा। कुछ कहना चाहते थे, पर कण्ठसे कोई शब्द न निकले।

मीरा नृत्य गीतमे बेहोश हो रही थी। उसकी चपल उगलियोंसे बज रहा था प्रेमका मधुर इकतारा और हरिनाम कीर्तनसे गूज रहा था राजदरबार।

आहिस्ते-आहिस्ते उदास वेषमें महारानी अञ्जनाने दरबारमे प्रवेश किया। उनके हाथोंमें मुरझाये फूलोकी एक माला थी।

राजा चीख उठे—"महारानी! तुम इस वेषमे क्यों? तुम्हे क्या हो गया है?"

महारानीने मन्द स्वरमे कहा—"इस वेषको मुझे आपने ही उपहार दिया है! मैंने सुना था, आज सावनकी रातके उत्सवमे मीराका हरिकीर्तन होगा, वेदनाओको न रोक सकी। मीराके छन्द मुझे यहा तक खींच लाये।"

महारानीने धीरे धीरे आगे बढकर मुरझाई माला मीराके गलेमे पहना दी। मीरा महारानीके चरणोपर लोट गयी। आज सार्थक हो गया उसका नृत्य गीत। सफल हो गयी उसकी दीक्षा और साधना। आज जैसा सम्मान उसने कभी नहीं पाया था।

राजा सिंहासनसे उतरकर महारानीके पास आये। उनकी आखे आसुओं से भीग रही थी। बोले—"देवी! मैंने तुम्हारे प्रेमको ठुकराकर अन्याय

किया है। विलासिताके मोहमें पडकर मैं तुम्हे भूल गया था, अधर्मी दुष्यन्त की तरह। मुझे क्षमा करो। तुम्हारे अकस्मात मिलनसे सावनकी रातका उत्सव सफल हो गया।"

मीरासे पूछा—"कवि कहा है?"

"कविको तो आपने ही दरबारसे निकाल दिया है। आपने ही तो उस दिन कहा था—आजसे मैं तुम्हारा मुह नही देखूगा।"—मीराने कहा।

राजा घबराकर बोले—"यह मैंने दूसरा महापाप किया। कवि सत्य मार्गका प्रदर्शक है। उसके द्वारा मानव-समाजका कल्याण होता है, मुक्ति मिलती है। आज मैं महापापका सबसे पहले प्रायश्चित करूगा। जाओ महारानी! राजमहलमे विश्राम करो—और मीरा!...तुम?.."

मीराने कहा—"मैं हरिनाम कीर्तन करती हुई काशी जाऊगी—वहासे अयोध्या। इसके बाद हिमालयकी तराइयोमें अपनी जीवन लीला सवरण करूंगी।"

मीरा राजा रानीको प्रणाम कर और हरिनाम कीर्तन करती दरबारके बाहर हो गयी। महारानी अन्तःपुरमें चली गयी। दरबार भङ्ग हो गया। सब दीपक बुझ गये!!!

राजा पृथ्वीपाल सावनकी उसी अन्धेरी रातमे अकेले ही पैदल चलने लगे—कविकी पर्णकुटीकी ओर। इस समय उनके शरीरका प्रत्येक रोम कविसे आलिगन करनेके लिये व्याकुल था। उनका मस्तक कविके चरणोंमें झुकनेके लिये बाध्य हो रहा था। हृदय कविसे अपने अपराधोंकी क्षमा याचनाके लिये पागल हो रहा था—अतृप्त और बेचैन!

# जीवनका तूफान

जब तूफानके झोंके आते है, प्रकृतिमे विद्रोह पैदा हो जाता है। बडे बडे दरख्त जमीनसे उखडकर धराधाम पर लोटने लगते हैं। मकानोंमे आग लग जाती है। छतें उडती हैं और मनुष्योमे हाहाकार मचता है। किन्तु जहा झोंके बन्द हुए, प्रकृति मुर्देकी तरह शात हो जाती है। पर मनुष्य जीवनमे एक बार जो तूफान उठता है, वह सहन नहीं होता। उसकी भयानकता इतनी विलक्षण होती है, कि आश्चर्यसे दातो तले उगली दबाना पडता है।

सेठ रामदयाल अपने इकलौते बेटेसे तङ्ग आ गये थे। वह परले सिरे का ऐयाश और बदतमीज था। सेठजीने उसे सही रास्तेपर लानेकी हजार कोशिशेंकी। समझाया बुझाया। लेकिन सब फिजूल, कुत्तेकी दुम सीधी न हुई। सेठजी खीझ उठे। करोडोकी सम्पत्ति थी उनके पास। मरते समय वसीयत लिखा। उसका साराश यह था—

"कानूनन मेरे लडके कुमारको हक है कि मेरे मरनेके बाद वह मेरी जायदादका मालिक हो। लेकिन मैं सरकारसे प्रार्थना करता हू, यह कानून मुझ अभागेपर न लागू किया जाय। कुमार नालायक और घर फूककर तमाशा देखने वाला है। मैं नहीं चाहता, मेरी गाढी कमाईका धन वह शराबके पीपोंमे समर्पित करे। मैं उसे एक पाई न दूगा।

'हा, यदि आजकी तारीखसे वारहवर्षके अन्दर कुमारको धर्मपत्नी सावित्रीके लड़का हो तो मेरी जायदाद नातीको दे दी जाय। यदि किस्मतकी वदनसीबीसे यह मौका न मिले और वारह वर्षका टाइम खत्म हो जाय तो सरकार मेरी सम्पत्तिसे धर्मशाले, कुएं, स्कूल और देहातोंमे पुस्तकालय वनवा दे। इस वीच रिसीवर मेरी सम्पत्तिकी देखभाल करेगा और गुजर वसरके लिये कुमार और उसकी धर्मपत्नीको ढाई सौ रुपये माहवार देता रहेगा। वारहवर्ष वाद यह रकम वन्दकर दी जायगी और जायदादकी पाई पाई सार्वजनिक कार्योंमें खर्च होगी।"

सेठ रामदयालने यह वसीयत लिखा और अपनी आहोंका तूफान कलेजे मे दवाये इस ससारसे चले गये। उनकी मृत्यु भयानक हुई—वह तड़प तड़पकर मरे थे।

[ २ ]

कुमारने सावित्रीसे कहा—"बूढेने नालायकी की। वसीयतमें एक हर्फ भी नहीं वदला जा सकता। यदि वारहवर्षके अन्दर तुम्हारे लड़का न हुआ तो करोड़ोंकी सम्पत्ति धर्मशाले, कुए और पुस्तकालयोंके वनानेमे गवर्नमेंट खर्चकर देगी। अव क्या करू ? किसी षड्यन्त्रकी जरूरत है।"

सावित्री वोली—"षड़यन्त्र—फड़यन्त्रसे कुछ न होगा। उल्टे भेद खुलनेपर जेलकी हवा खानी पड़ेगी। अव ऐसी तरकीव लडाओ, जिससे मुझे लड़का हो और सारी सम्पत्ति अपने हाथ लगे।"

कुमार कुछ सोचमें पड़ गया। फिर हल्की मुस्कुराहटके साथ वोला—"लड़का जरूर पैदा करूंगा।"

सावित्रीने कहा—"रहने दो यह चोचले। तुम्हारे किये कुछ न होगा।"

"मैं सब करके दिखा दूंगा।"—कुमारने जोशमें आकर कहा—"सारा दोष तुम्हारा है, जो एक चूहा तक न पैदा किया गया।"

दोष मेरा नहीं, तुम्हारा है।"—सावित्री जोर देकर बोली।

योंही बातोंका बतगड़ बढने लगा और वह भी रोज-रोज। मारपीट तककी नौबतें पहुचीं। एक दूसरेको दोष देने और नीचा दिखानेकी कोशिश करने लगे। झगड़े फिसादोंसे दाम्पत्य जीवनमे आगकी लपटें उठने लगीं। अकस्मात एक दिन सावित्रीने कहा—"सुनते हो, मैं गर्भवती हू।"

खुशीसे कुमारका कलेजा धड़कने लगा। उसे जैसे कारूंका खजाना मिल गया। दोस्तोंको दावतें दी जाने लगीं। फकीरोंको खैरात बटने लगी। लेकिन मनुष्य प्रोग्राम बनाता है कुछ और दैवी घटना घटती है कुछ। ठीक यही बात सावित्रीके लिये भी हुई। जैसे बच्चे बैलूनमे हवा भरकर उसे फुलाते हैं और नलीके पाससे उंगली हटाते ही हवा सुर्रसुर्रकर निकल जाती है—वैसे ही चार महीने बाद सावित्रीका गर्भ गिर गया और कुमारकी दुनिया अन्धकारोंसे भर गयी।

सावित्रीने अनेक सकट सहे। मौतके मुंहसे बची, मुसीबतोंके तूफानने उसे झकझोर डाला—पर अब उसमे मां बननेकी इच्छा और भी बलवती होने लगी। उसने सतान उत्पत्ति के लिये डाक्टरसे सलाह लेना शुरु किया। दान पुण्य भी बढने लगे और मदिरोंमे ग्रह शातिकी पाठे बैठा दी गयीं।

वह फिर गर्भवती हुई। लेकिन चार महीने बाद फिर वही घटना!—गर्भपात?

तीसरी मर्तबा फिर यही किस्सा हुआ। जब वह चौथी बार गर्भवती हुई तो उसने मन ही मन प्रतिज्ञा की—इस दफे किसी तरह भी गर्भ न गिरने दूंगी। यदि बदनसीबीसे वह भी बरबाद हो गया तो कोई दूसरा षड़यन्त्र रचूंगी और सेठ रामदयालकी जायदाद हथियाकर ही दम लूंगी।

यह गर्भ भी गिर गया !!!

सन्ध्याका समय था। चिड़ियोंके झुण्ड बसेरे लेनेके लिये तहलका मचा रहे थे। सावित्री छतपर उदास बैठी थी। उसके जीवनमें भीषण तूफान चल रहा था। वह अभी तक कुछ भी निश्चय न कर पायी, मुझे किस रास्तेसे चलना चाहिये। सम्पत्ति हथियानेकी तरकीब क्या है और सारी समस्या सहजमें ही कैसे सुलझाई जा सकती हैं।

एकाएक मिस प्रभाने प्रवेश कर कहा—"बहूजी, क्या कर रही हो? तबीयत तो अच्छी है न।"

मिस प्रभा अधेड़ उम्रकी नर्स थी। सावित्रीकी—जिगरी दोस्त और कुमारीकी गुप्त प्रेमिका। चलता पुर्जा ज्यादा। सावित्रीने कहा—"आओ बैठो। कोई तरकीब नहीं लड़ती। मैंतो निराश हो गयी हू।"

"सब ठीक होगा।"—मिस प्रभाने सावित्रीको धीरज देते हुये कहा—"मैं सब प्रबन्ध कर दूगी। आजसे आप सब से मिलना जुलना बन्द कर दे। प्रचारकर दूंगी-बहूजीके बेटा होने वाला है।"

सावित्रीकी आखोंमे आसू भर आये। बोली—"मेरे भाग्यमे बेटा कहा? मैं सब तरहसे लुट गयी।"

मिस प्रभाने उचक्केकी तरह चारो तरफ नजर दौड़ाई। देखा,—वहाँ

कोई नहीं है। सावित्रीके पास मुह सटाकर बोलीं—"मेरे घरमे एक विधवा छोकरी है। ससुरके सम्बन्धसे वह गर्भवती हो गयी। उसने कलकके डरसे उसे घरसे निकाल वाहर कर दिया। दो तीन महीनेके अन्दर ही उसके लडका पैदा होगा। मैं उसे छिपाकर आपके पास ले आऊगी और शहर भरमे प्रचारकर दूगी—बहूजीके लडका हुआ है।"

सावित्री चौंकी और प्रसन्न होकर बोली—"तरकीब तो अच्छी है। पर उस विधवाका क्या होगा? क्या वह अपना बेटा मुझे देगी?"

"इसका भार मेरे जिम्मे।"—मिस प्रभाने गम्भीर होकर कहा—"मैं सब ठीककर लूगी। आज कलकके बच्चे मातायें कूड़ा घरोमे फेंक देती हैं। गला दबाकर मार डालती हैं—उससे तो यही अच्छा होगा कि बच्चा आपकी गोदमें खेलेगा। और विधवा!—उसे मैं आराम से रखूगी।"

"तुम सब कर सकती हो।"—सावित्रीने आदरके साथ कहा—"मैं सब तरहसे तुम्हारी हू। लड़का मुझे जरूर चाहिये। सौ रुपये इनाम दूगी।"

"सौसे काम न चलेगा"—मिस प्रभाने सोचकर कहा—"पाचसौ विधवा को देने होंगे—पचास खुदरा खर्च। साढे पाच सौसे सब काम निकल जायगा।"

"अच्छा दे दूगी।"—सावित्रीने प्रसन्नतासे कहा—"सिर्फ इतना ही नहीं! और भी मुह मीठा कराऊगी। पर काम जल्दी होना चाहिये।"

मिस प्रभाने स्वीकृत दे दी कि काम जल्द होगा। तुम चिन्ता न करो।

[ ३ ]

तीन-महीने वाद !—

गर्मीकी प्रचण्ड धूप—दो पहरका समय! मिस प्रभाने एक हसीन युवतीके साथ सावित्रीके घरमें प्रवेश किया। उसके हाथमें एक पेटी थी। उसे खोला,—एक नवजात शिशु हाथपैर पटक रहा था। प्रभाने प्यारसे उसे उठाया और सावित्रीके हाथमे देकर कहा—"वहू! लो यह लाल! कितना सुन्दर है, कितना अच्छा!"

सावित्रीने कापते हाथोंसे वच्चेको गोदमें उठा लिया। उसने क्षणभर उसे देखा और बच्चेका मुंह चूम लिया। जैसे सावित्री ही उसकी मा है और उसे वह बच्चा मानो बहुत दिनोंके खो जानेके वाद मिला है। उसके माथेपर पसीनेकी बूंदे चमकने लगीं और कलेजा जोर जोरसे धड़कने लगा।

पाच सौ रुपये विधवा स्त्रीको मिले और पचास मिस प्रभाको।

विधवाने कहा—"सावित्री—वहन! बच्चेको अच्छी तरह रखना। यह मेरा नहीं, तुम्हारा है। इसे देखकर मैं दुखकी आगमे झुलस रही हू। लेकिन क्या करूं?—आप जैसे अमीर घरमे पलकर इसकी जिन्दगी फूले फलेगी। इच्छा तो नही है, इसे आपको दूं। लेकिन कोई बस नहीं, बच्चा पाप और कलकका है।"

विधवा मिस प्रभाके पास चली गयी। सावित्रीका हृदय खुशीसे नाचने लगा। उसने फूलोंकी सेज तैयार की और बच्चेको छातीसे चिपटाकर सो गयी। उसका यह मातृ स्नेह ससारकी सभी माताओंसे बढा चढा और आदर्श माताओंकी ईर्षाका विषय था।

सम्पूर्ण घटना शाति और सहूलियतके साथ घट गयी। किसी तरहका

गोलमाल नहीं हुआ। लोगोंने कहा—सावित्रीके बेटा हुआ है, जैसे पूनोका चाद।

सबने प्रसशाकी। अखबारोंने बधाईके गीत गाये। मिलनेवालोंकी भीड़ लग गयी। कुमारने शानदार दावात दी। किन्तु सालभर बादही ऐसी विचित्र घटना घटी कि सब किये करायेपर पानी फिर गया। समाजमें सनसनी फैल गयी और लोग आश्चर्यसे सन्न रह गये।

( ४ )

बात यह थी।

बच्चेको पहली वर्षगाठ मनायी जा रही थी। आमन्त्रित व्यक्तियोंमें राजा, रईस और हजारों मध्यम श्रेणीके व्यक्ति मौजूद थे। सङ्गीत-समारोह चल रहा था। इसी समय एक पागल औरतने चिल्ला-चिल्लाकर रङ्गमे भङ्ग कर दिया। लोग चौकन्ने होकर भागने लगे।

पगली भीड़मे धस गयी। उसके गलेकी एक ही आवाज थी—"मेरा बच्चा! मेरा बच्चा!!"

लोगोंने उसे रोकनेकी कोशिश की, लेकिन व्यर्थ!

पगलीमे गजबका बल था। वह लोगोंको ठेलती, कुचलती और घायल-करती कुमारके भवनमें धस गयी। जैसे इस घरमे उसकी कोई धरोहर धरी हो और घरवाले उसे देनेसे इनकार करते हों। वह चिल्ला रही थी—"मेरा बच्चा! बच्चा!"

उसकी इस चिल्लाहटमे दिल दहलानेवाली वेदना थी। जो उसे बाधा देता, वह दातोंसे काटकर उसे घायलकर देती। उसने कितने ही औरत-मर्दों—

के कीमती कपडे फाड डाले, वस्तुयें नष्ट कर दीं। भोजनकी टेबिलें उलट दीं, कुर्सियोंको तोड़ डाला। उसके इन अत्याचारोंसे आमन्त्रित व्यक्तियोंमें त्राहि-त्राहि मच गयी और लोग भागने लगे।

अन्तमे कुछ आदमियोने जानपर खेलकर पगलीको गिरफ्तार कर लिया। वह हाफते हुए चिल्लाई—"इस मकानमे मेरा बच्चा है। उसे मुझे दे दो। मैं उसकी मा हू—मां· · · · !"

लोग सन्नाटेमें आ गये। कानाफूसी शुरू हो गयी—मामला क्या है? क्या जिस बच्चेकी सालगिरह मनानेके लिये हम इकट्ठे हुए हैं, वह बच्चा कुमार साहबका नहीं है?

घण्टोंके बाद इस रहस्यका उद्घाटन हुआ। पगलीके बयानसे मिस प्रभा बुलाई गयीं। उन्होंने कहा—"आज जिस बच्चेकी वर्षगांठ मनायी जा रही है, दरअसल वह बच्चा कुमार साहबका नहीं—इस पगलीका है। यह हिन्दू समाजसे निर्वासिता एक गरीब विधवा है। इसका अपने ससुरके साथ अनुचित सम्बन्ध था। दुर्भाग्यसे जब गर्भ रह गया—कलक भयसे इसे घरसे निकाल बाहर किया गया। यह अनाथ अवस्थामें भटकती हुई एक दिन मुझे सडकपर मिली। इसकी आत्मकहानी सुनकर मुझे बडा दुःख हुआ और मैं इसे अपने घर ले गयी।"

मिस प्रभाकी आखोंमें आसू भर आये। उन्हें रूमालसे पोंछते हुए पुनः बोलीं—"जब इसके बच्चा पैदा हुआ, कुमार साहबकी धर्मपत्नी सावित्रीने इसे खरीद लिया। इसका ख्याल था, पापका बच्चा लेकर कहां मारी-मारी फिरूँगी? अमीर घरमें उसकी जिन्दगी बच जायगी। लेकिन इन्सान सोचता

कुछ है, होता कुछ। विधवा अपने बच्चेके लिये रात-दिन तड़पती और छिप-छिपकर बच्चेको अपने स्तनका दूध पिला आती थी। यह रफ्तार छः महीनेतक रही। छ महीने बाद भेद खुल जानेके डरसे सावित्रीने इसे घरमें आना-जाना बन्द कर दिया। यह उसी दिनसे पागल हो गयी और बच्चेको दूध पिलानेके लिये इसका दिमाग दिन-दिन खराब होता गया। मैं सौगन्ध खाकर कहती हू—बच्चा इसीका है। इसे फौरन वापस कर दिया जाय। माका दूध न पीनेसे वह महारोगी हो गया है। दवाइयोंसे जरा भी फायदा नहीं। यदि बच्चा इसे वापस न किया गया तो इसके हाथोंसे शहरमे पचासों खून होंगे और तमाम सम्पत्ति बरबाद होगी।”

भीड़ने दांतों तले उंगली दबा ली। उफ॰ ॰ कुमारने पैतृक सम्पत्ति हथियानेके लिये कैसा विचित्र षडयन्त्र रचा था। किन्तु चालाकी और षड-यन्त्रों द्वारा दुनियामे कोई भी काम नहीं सफल किया जा सकता।

एक आदमीने कहा—“मिस प्रभासे कुमारकी खटपट हो गयी है। प्रभा उसकी पुरानी रखेली थी। वह भी पैतृक सम्पत्तिमे आधा हिस्सा मांगती थी। जब कुमारने उसे देनेसे इन्कार कर दिया—इसने सब बातोंका भण्डाफोड़ कर डाला।”

एक दूसरे व्यक्तिने पगलीसे कहा—“लोग चाहे जो कहें पर कुमार बाबू बेकसूर हैं। सारा कसूर तेरा है। अभी पुलिसके सुपुर्द करता हूं।”

पगली गरज कर बोली—“कोई परवाह नहीं। मैंने अपने बच्चेको बेचा है। रूपये भी खाये हैं। सब कसूर मेरा ही है। मुझे पुलिसमे दे दो। फांसीपर लटका दो। मैं सब सहूंगी। किन्तु बच्चेको न छोड़ूंगी। उसे मुझे वापस दे दो। मैं उसकी मां हूं!”

लोगोंने देखा—पगलीकी मातृमूर्ति बड़ी भयानक है। वह पुलिसके सुपुर्द कर दी गयी। मानसिक उत्तेजनासे उसका दिमाग खराब हो गया था और वह मा कहलानेके लिये इस तरह व्याकुल हो रही थी कि उसके स्तनोंसे टपाटप दूध चू रहा था। जेलके सीखचोंके अन्दर बन्द होकर जरूरतसे ज्यादा बकती, चीखती, चिल्लाती और आसू बहाया करती थी। अन्तमें मामला यहातक पहुचा कि मुकदमा चलनेके पहले ही वह तडप-तडप कर मर गयी!

उसके दिलका तूफ़ान वह तूफ़ान था, जो एक बार उठकर फिर कभी बन्द नहीं होता और मनुष्य जीवनको मटियामेट करके ही दम लेता है।

मिस प्रभाका क्या हुआ? सावित्रीने समाजको मुंह दिखलाया या नहीं? कुमारकी पैतृक सम्पत्ति किस भाडमे झोंकी गयी?—यह मुझे नहीं मालूम! हाँ इतना मेरी डायरीमे अवश्य नोट है :—

"पगलीकी मृत्युके दो महीने बाद ही बच्चेका भी देहान्त हो गया। मांका दूध न पीनेकी वजहसे उसे किसी असाध्य बीमारीने घर दबाया। शहरके बडे-बड़े डाक्टर भी उसे बचानेमे फेल रहे। शायद मा के पागल प्राणोंने ही नवजात शिशुको अपनी ओर आकर्षित कर उसे खत्म कर दिया हो! आह···· जीवनका तूफान कितना भयानक होता है!"

———✻———

# मरनेके बाद !

---

हमारे शहरका यह दस्तूर है कि यहा रोज ही दस-पांच मोटर दुर्घटनायें होती हैं। इनमें कितने हो आदमी घायल होकर या तो अस्पतालमें कराहते हैं या हमेशाके लिये इस धरा धामसे चल देते हैं। इन दुर्घटनाओंमें सबसे ज्यादा मजा यो यह है, कि यदि कोई अमीर आदमी एक्सिडेण्टका शिकार होता है तो हजारोंकी भीड़ हो जाती है। पुलिस सार्जेण्ट और न मालूम कौन-कौन घटनास्थलपर आ धमकते हैं। किन्तु यदि इस दुर्घटनासे कोई गरीब मर गया, तो मुश्किलसे दस-बीस आदमी इकट्ठा होते हैं। गरीबकी इस लाशसे किसीको दिलचस्पी नहीं होती,—क्यों, इसलिये कि उसके पास चादीके चमकते टुकड़े नहीं होते, दुनियाको ठगनेके हथकण्डोसे वह वाकिफ नहीं होता।

गरीव रग्घूकी भी यही दशा हुई। वह किसी मोटे सेठके यहा दस रूपये महीनेकी गुलामी करता था। उसने इन्हीं दस रूपयोंमें सेठके हाथ अपनी जिन्दगी बेच दी थी। सेठजीकी सेठानीने आज रातको बारह बजे उसे मिठाई लानेको भेजा था बाग बाजार। पर, बेचारा अभागा!

जोड़ासाकूके मोड़पर पहुचते ही भीपण दुर्घटना हो गयी। किसी अमीरकी दौडती मोटरके नीचे वह दबकर मर गया। लाश तड़पने लगी और मोटर तेज रफ्तारसे भागती हुई अदृश्य हो गयी।

रघू मर गया, पर मनुष्योंमे किसी तरहकी हलचल न मची। उसके लिये किसीके प्राण न चीखे। रातके वारह वज गये थे—चारो तरफ सन्नाटा था। उसकी लाशके नजदीक कुछ भिखमगे दौड आये—कुछ फुटपाथके लेटे हुये मजदूर।

रघूकी लाश तड़प-तड़पकर ठण्डी हो गयी। एकने कहा—बेचारा मर गया। दूसरा बोला—शायद गाडीके चक्केके नीचे आ गया। तीसरेने दबी जवानसे कहा—राम राम। इसके बाद कुछ न हुआ। पुलिसका सिपाही आया और वह लाशके पाससे लोगोंको हटानेकी कोशिश करने लगा।

इसी समय एक अद्भुत घटना घटी!

## ( २ )

रघूकी आत्मा धीरे धीरे शरीरसे निकलकर लाशके पास खडी हो गयी। उसने देखा, खूनसे लथपथ उसका शरीर पडा है, उसे चारो तरफसे घेरे हैं—रास्तेके कुछ भिखारी, फुटपाथपर सोनेवाले गरीब मजदूर और दो एक सिपाही।

रघूको अपनी लाश देखकर वडा आश्चर्य हुआ। वह उस छोटी सी भीडसे कुछ कहना चाहता था, किन्तु उसके गलेसे कोई आवाज न निकली। इस समय उसे महान शान्ति मालूम हो रही थी। वह एक स्वर्गीय सुखमे बसा जा रहा था—उसने एक बार फिर अपनी लाशको ओर देखा—ओफ कैसा विकृत मुख है। कटी छटी आखे, फटा हुआ सिर—! उसे अपना शरीर देखकर वडी घृणा हुई-कुछ डर भी गया। किन्तु यह मिट्टीकी काया है, इससे भय और घृणा कैसी? मिट्टीसे उत्पन्न हुई थी—मिट्टीमें ही मिल

गयी। इसपर माया क्यों ? ममता कैसी ? रघूकी प्रेतात्मा उस मुट्ठी भर भीड़को छोडकर चलने लगी—धीरे धीरे चितपुरकी ओर ! उसने देखा, तरकारी भाजियोंसे भरी हुई लारिया नूतन बाजारकी ओर जा रही हैं। कुछ मोटरे भी दौड़ रही हैं। उसकी इच्छा हुई वह मोटरोंको उठा-उठाकर जमीनमे पटक दे और उन्हे चकनाचूरकर डाले। किन्तु उसकी यह इच्छा पूरी न हुई। रघूपर पेट्रोलका बदबूदार धुआ उड़ाती हुई मोटरें तेजीसे दौडी जा रही थीं। रघू उन्हे पकड़नेकी कोशिश करता,—वे दूर भाग जातीं। लेकिन अब रघू हमारी आपकी तरह इस पापी ससारका आदमी न था। वह हवामे उड सकता था, जमीनमे धस सकता था। उछलकर एक चौमजिले मकानपर चढ गया। उसकी तमाम खिडकियोंमे झाककर देखा—किसी कमरेमे लोग खटमलोंकी तरह भरे कुम्भकर्णी निद्रामे नाक बजा रहे थे। कहीं शराबके प्याले ढल रहे थे, कहीं जुआ हो रहा था। रघूको इन दृश्योंमें जरा भी दिलचस्पी न मिली। वह कई मकान झाकते, चौमजली छ मजली हवेलिया लाघते हरीसन रोडके चौराहेपर आ गया। उसने देखा, जिस हरीसन रोडपर दिनमे लोभी मनुष्योंकी चख-चख और गाडियोंकी ठेलमठेलसे जी घबरा उठता था, उसी हरिसन रोडमे इस समय विलक्षण शाति है। मानो वहाकी जमीन भी थककर सो रही है। रघू चौराहेपर खडा होकर सोचने लगा—किधर जाऊँ ? क्या करूं ?

वह मिनटों इस उधेड्बुनमें सर खपाता रहा। एकाएक उसे अपने सेठजीकी याद आ गयी—जहा वह गत बीस वर्षोंसे नौकरी करते आया था। जिनकी सेवाके लिये उसने दस रुपये महीनेपर अपनी आत्माको बेच दिया

था—और उसका छोटा सा तीन वर्षका बच्चा ! दुल्लू भी तो वहीं है । रग्घू एकाएक स्नेह भावनासे भर गया । उसके दिलमें न मालूम कहाकी ममता भर आयी । अब वह हावड़ा स्टेशनकी ओर चला । उसके सेठजी हवड़ेमें ही रहते हैं । दिवाले मारकर, गरीबोंके खून चूसकर बेईमानी और छल कपटके चादी सोनेसे उनकी तिजोरिया भरीं हैं उन्होने अमेरिकन टाइप का एक छमजिला मकान बनवाया है । खूबसूरत और चमकदार !—किन्तु इससे रग्घूको क्या ? वह अपने प्यारे बच्चे दुल्लूको देखना चाहता है, सेठजी और उनकी स्त्रीको देखना चाहता है । उनके नौकर-चाकर याने अपने दोस्तों से मिलनेकी इच्छा है । इसके अलावा वह यह भी जानना चाहता है, मेरी मृत्युसे उनपर क्या प्रभाव पड़ा ? वे मेरे और मेरे बच्चेके लिये क्या कर रहे हैं ।

उसका दिल मारे खुशीके उछल पड़ा । आगे पैर बढाये । इच्छा हुई रिक्शेपर चढकर मकान जानेकी । एक रिक्शेवाला हवड़ेकी ओर जा रहा था । रग्घू उछलकर उसपर चढ गया । रिक्शेवालेको ऐसा जान पड़ा जैसे अकस्मात रिक्शेपर एक बहुत ही वजनदार पत्थर गिर पडा हो । उसके हाथ रिक्शेसे छूट गये । वह चीख उठा और रिक्शा उलटकर जमीनमे चक्कर खाने लगा ।

रग्घू ठहाका मारकर हँस पड़ा और आगे बढा । वह अब एक टैक्सीके सामने खड़ा था । ड्राइवरसे कुछ बाते करना चाहता था, पर जबानसे एक हर्फ न निकला । रग्घू समझ गया मैं मर गया हू और मरे आदमीमे बोलने की शक्ति नहीं होती ।

अब वह बड़ी मौजसे आगे बढा। उसने देखा—उसकी ही तरह ढेरकी ढेर प्रेतात्मायें चारो तरफ चल फिर रही हैं। कोई मकानकी दीवाले फाद रहा है। कुछ जमीनपर रेंग रहे हैं, कुछ खम्भोपर चढ रहे है। उसने कई प्रेतात्माओंको ट्रामके विद्युत तारोपर कसरत करते और उछलते कूदते देखा। उसमे उसके पहचानका भी एक आदमी था। रघूने उसे देखा और उसने रघूको। दोनों मुस्कुरा दिये, पर बोला कोई किसीसे नहीं। प्रेतात्माओंमे बोलनेकी शक्ति नही होती। वे सब देख सुन सकते हैं, पर उन्हे कोई नहीं देख सकता। घूमने-फिरनेवाली प्रेतात्माओमे औरत, मर्द बच्चे सभी तरहके लोग थे।

रघू हवडा पुलके पास आया। उस समय पुल खुला था। विशाल-काय व्यापारी जहाज भों-भोंकी आवाजे लगाते हुये पागलोकी तरह पुल क्रास कर रहे थे। रघू जाना चाहता था पुलके उस पार—अभी और रातके इसी सन्नाटेमे। पर करे क्या? हवड़ेका पुल तो खुला है। रघू कुछ सोचने लगा।

पर हमारी आपकी तरह प्रेतात्माओंको इस झंझटी ससारमे मुसीबतें नहीं झेलनी पड़तीं। वह गङ्गाकी लहरोपर पैदल ही चलने लगा। डोंगियो, जहाजो और मगर-मच्छोंसे अपनेको बचाता हुआ वह बड़े सुन्दर ढङ्गसे हव-ड़ेके उस पार पहुचा। उस समय स्टेशनकी लम्बी घड़ीने टनटनकर तीन बजाये। रघू भी अपने सेठकी कोठी के सामने आकर एक चबूतरेपर जम गया। वह कुछ थक सा गया था ओर उसे दस पाच मिनट विश्राम लेनेकी जरूरत थी।

( ३ )

रघूने आखें फाड-फाडकर देखा—मकानका फाटक बन्द है। अन्दर जानेका कोई उपाय नहीं। गद्दी घरके बाहरी शीशेकी खिडकीमें उसने आखे भिडाकर देखा—अन्दर हल्की हरी रोशनीका धीमा प्रकाश फैल रहा है और बिजलीका पखा तेजीसे घूम रहा है। फर्शपर तख्त बिछा है, तख्तपर मोटी सफेद गद्दी। उसी पर सेठजी गहरी निद्रामें खुर्राटे ले रहे हैं जाघोंके बीचमें दो तीन बालिशे दबाये। उसने खिडकीमे कान लगाकर सुना—सेठजीके गलेसे घर्र-घर्रकी आवाज आरही है और होठ कुछ मुस्कुरा रहे हैं।

रघूने मकानके चारो तफर नजर दौडाई। अन्दर जानेका कोइ उपाय न था। अपने बच्चे दुल्लूको देखनेके लिये वह अधीर हो उठा। तेजीके साथ उछला और तीन चार छलागोंमे ही मकानको छतपर हो रहा। मकान के छतपर रसोई घर थे और रघूके रहनेकी एक सडी हुई पुरानी कोठरी। रघूने कोठरीकी सिटकनो खोली—शायद दुल्लू अन्दर सो रहा हो। रघू दुल्लूको कलेजेसे चिपटाकर इसी सडी कोठरीमे रोज सोता था। उसके आश्चर्यका कोई ठिकाना न रहा—कोठरीमे वह कुछ खाने पीनेके टूटे-फूटे बर्तन, टाटका बिछौना और एक फटी हुई गन्दी चटाई। पर दुल्लू कहीं नही। दुल्लूको देखनेके लिये आश्चर्य, भय और बेचैनीसे उसका कलेजा जोर जोरसे धडकने लगा। वह छतकी सीढियोंसे मकानके नीचे उतर आया। तिमजिलेपर उसकी मालकिन रहती थी। कमरा अन्दरसे बन्द था। उसमें किसी तरहकी रोशनी न थी। एक खिडकीका जरा सा पर्दा

हटाकर उसने तेज निगाहोसे झाका। कुछ भी न दिखाई दिया। हा, कुछ फुसफुसाहट सी जरूर सुनाई दे रही थी। जिसे वहुत कोशिश करने पर भी रग्घू न समझ सका। वह दुल्लूको देखनेके लिये अवीर हो रहा था। वडवड़ाता हुआ नीचेके कमरेमे आया। उसने एक एक कोठरी झाककर देखी, एक एक कमरा छानकर परीक्षा की—दुल्लू कहीं नहीं, उसका चिन्ह तक गायव था!

वह खीजकर उस कोठरीमे जा पहुँचा—जो तग, वदवूदार और सील खाई हुई थी। इसमे तीन व्यक्ति रहते थे—दो दरवान और एक कहार। रग्घूने आखें फाड-फाड देखा—तीनो मौजसे टागे पसारे सो रहे है और उसका वच्चा दुल्लू एक कोनेमे चित्त पड़ा है। आह! सोता हुआ कैसा भोला मुख, कितना निर्दोष और पवित्र सौन्दर्य! रग्घूके मनमे महान् पुत्र-स्नेह उमड आया। उसने जी भरकर दुल्लूको देखा, एक आह खींची, फिर धीरे से झुककर उसके होठोंको चूम लिया।

दुल्लूको जैसे सापने काट खाया। वह भयभीत स्वरसे चीख उठा और चिल्ला-चिल्ला कर रोने लगा। कहारकी निद्रा टूटी। उसने दुल्लूको उठाकर अपने पास लिटा लिया और उसकी पीठ सहलाता हुआ बोला—"सोजा। न रो।"—पर वच्चेने कोई जवाव न दिया। हा, ग्वालेके प्यारसे उसकी रुलाई क्रमश बन्द हो रही थी और उसे कुछ झपकी आ रही थी।

रग्घूने सन्तोषकी सास ली। किन्तु उसे यह देखकर वड़ा ताज्जुब हुआ कि दुल्लू उसके प्यारसे रोया क्यो? एक दूसरा तूफान भी उसके दिलको झकझोर रहा था—मालकिनके कमरेसे फुसफुसाहटकी आवाज कैसी आ रही

थी—रग्घूको बडा कौतूहल हुआ। वह धड़धडाकर ऊपर चढ गया। जरा-सा पर्दा सरका कर फिर सुनने लगा। इस बार मीठे कहकहे उड रहे थे। रग्घूसे रहायस न हुई। वह खिड़कीके सहारे कमरेमें घुस गया। भयानक अन्धेरा था। झट बिजलीकी स्वीच खोल दी। उस प्रकाशमे रग्घूने जो कुछ देखा, उसका दिमाग घूम गया—आखें कपालपर चढ गयी। उसने देखा—मालकिनजी मस्तानी अदासे हरीसिहकी गोदमे लेटी हैं। हरीसिह मोटर ड्राइवर था और उसी मकानमे रहता था।

बिजलीका प्रकाश होते ही दोनों एक दूसरेसे अलग हो गये। उन्हे बडा ताज्जुब हुआ। आखें फैला-फैलाकर उन्होने भयभीत दृष्टिसे चारो तरफ देखा—कहीं कोई न था। स्विचके पास ही एक छिपकली थी। मालकिनने कहा—छिपकलीने स्वीच खोल दी होगी। हम ऐसे बन्द कमरेमें हैं, जहा हवातक नही प्रवेश कर सकती।

पुन. बत्ती बन्द कर दी गयी।

रग्घू इस समय मारे गुस्सेके दात पीस रहा था। उसने दृढ निश्चय कर लिया—आज बगैर दोनोंकी जान लिये दम न लूगा। अच्छा ही हुआ—जो मोटरके नींचे कुचल कर मैं मर गया, नहीं तो यह भेद कभी न खुलता और हरीसिह सेठजीका सर्वनाश करता रहता। उसकी सम्पूर्ण सनसनीमे सेठजीका नमक उछलने लगा। वह गुस्सेसे कापता हुआ आगे बढा—उसने एक हाथसे मालकिनका गला दबाया, दूसरेसे हरीसिहका। किन्तु उन दोनो पर रग्घूकी ताक़तका कोई असर न हुआ। उन्हे मालूम तक न हुआ कि कोई मेरा गला दबा रहा है। दोनो ज्यो के त्यो आनन्दकी मस्तियोंमे मशगूल थे। रग्घू खीझ उठा। उसने बिजली जलाकर रोशनीकी सबसे बड़ी

झाड तोड़ दी। झाड मालकिनके सरपर गिरी। सर फट गया और कमरा खूनसे लाल होने लगा। हरीसिह दरवाजा खोलकर भागा। रग्घूने शैतानकी तरह उसका पीछा किया। वह अपने घरमे घुस गया और अन्दरसे सिटकिनी बन्द कर ली। रग्घूको अन्दर जानेके लिये एक सूराख तक न मिला। वह धड़धड़ाता हुआ गद्दीमे जा घुसा। देखा, सेठजी टेलीफोनपर बातें कर रहे हैं, पुलिसका टेलीफोन था। आवाज थी—"आपका नौकर रग्घू मोटरसे कुचल कर मर गया है! दुर्घटना रातके दो ढाई बजे हुई। जाचके लिये लाश अस्पताल भेज दी गयी है।"

सेठजीने खटाकसे टेलीफोन रख दिया। बड़बड़ाते हुये उठे—"साला एक न एक झंझट लगा ही रहता है। किसी तरह भी जी को चैन नहीं। गधेको इतनी रात सड़कपर जानेकी क्या जरूरत थी? न वहा जाता, न बेवकूफ मरता!"

उन्होने दरवानोको जगाया और सब घटना बयानकी। एकने कहा—"हुजूर! रघुआ बडा बदमाश था। वह रातको कहीं चोरी करने गया होगा।"—दूसरेने कहा—"रघुआ जुआ भी खेलता था और छिप छिपकर शराब भी पीता था।"

सेठजीने कहा—"मैं बहुत दिनोसे उसकी शिकायतें सुन रहा था। अच्छा हुआ, मर गया!"

रग्घू यह सब सुन रहा था। उसे ऐसा जान पडा—मानो उसके कलेजे मे एक साथ ही सैकड़ो बर्छे और छूरे भोक दिये गये है। वह निर्दोष था। उसने जिन्दगीमे न कभी शराब पी, न जुआ खेला, न चोरीकी नौबत आयी।

उसने जिन्दगी भर सेठकी सेवाकी, उनका हुक्म बजाया ! पर उसका पुरस्कार क्या मिला ? झूठे कलक और गालिया !—ओफ, यह ससार कैसे भयानक भेडियोसे भरा है । मनुष्योके बीच मनुष्योकी शक्लमे काले साप घूमते हैं, राक्षस और कुत्ते ! मोटर ड्राइवरने मेरी जान लेकर मेरा महान उपकार किया है । इस पापी ससारमे और रहनेकी इच्छा नहीं होती । यहा चारो तरफ नर्क है !—नर्ककी ज्वाला है !

सेठजीने दरवानसे पूछा—"रघुआका लडका कहा है ?"

दरवानने जवाब दिया—"मेरी कोठरीमे । उसे जोरोका बुखार चढ आया है ।"

सेठने कहा—"उसे आज शामको अनाथालयमे दे आना । अपनेको दवा-दारूके झंझटमें पड़नेकी जरूरत नहीं ।"

रग्घूका रहासहा दिल भी टूट गया । उसकी आखे गर्म आसुओंसे तर हो गयीं । वह धीरे-धीरे दुल्लूके पास पहुचा । उसके बदनपर हाथ धरकर देखा-बच्चा भयानक बुखारसे उल्टी सासें ले रहा है ।

वह और भी जोरसे चीख उठा । रग्घूके दिलमे प्यारका तूफान बहने लगा । उसने पचासो चुम्बनसे दुल्लूका मुह लालकर दिया ! दुल्लू छट-पटाने लगा । कहारकी आखोंमे आसू भर आये । दुल्लूको एक हिचकी आयी और वह कुत्तोकी मौत मर गया ।

रग्घूके दिलमे जरा भी दया न आयी । उसे दुल्लूकी मौत बड़ी प्यारी मालूम हुई । उसने देखा—एक अधखिला सुन्दर फूल आसमानको ओर उड़ा जा रहा है ।

रघूने उसे मुट्ठीमे पकड़ कर अपने कलेजेसे छिपा लिया और वायुमण्डल में धसता हुआ ऊषाकी लालीमे समा गया। उस ऊषाकी लालीमे, जिसे पवित्र आत्मायें ब्रह्मबेलामे प्रणाम करती हैं। जो तपस्वियोंकी साधना और आराधना है!

उस समय इस घृणित ससारमे वैसी ही पापमय लीलायें चल रही थीं। सेठानीजीका सर फट गया था और सेठजी डाक्टरके साथ घावोपर पट्टी बाध रहे थे।

——•——

# दिल्ली मेल में...      ..

—*—

## ( १ )

मुझे स्टेशनसे बडा प्रेम है। जब भी फुर्सत मिलती है, स्टेशन चला, जाता हू और वहाके कोलाहलोमें अपनेको विलीनकर देता हू।

मुझे स्टेशनसे क्यो इतनी दिलचस्पी है? इसलिये कि मैं इञ्जीनियर हूं। मेरा इरादा है, भविष्यमें मैं ऐसे स्टेशनका आविष्कार करू—जिसके प्लेटफार्म चलते फिरते हो। इञ्जिन और स्टेशनकी शक्लोमे भी तबदीली की जरुरत है। टिकट बेचनेके सिस्टम वड़े भद्दे हैं। असलमें टिकट अपने आप बिकना चाहिये। सारा काम मैशीनसे हो। टिकट बेचने वाले औरत मर्दोंकी जरूरत नहीं है।

इन्ही समस्याओंको सुलझानेके लिये मुझे स्टेशनसे बडी दिलचस्पी है। रातें बीत जाती हैं, दिन खत्म हो जाता है—पर मेरे आविष्कारोंका चर्खा नहीं बन्द होता। कुछ लोग कहते हैं—बौड़म है। कुछ कहते हैं सिडी पर मुझे इन बेवकूफोंकी बहकसे क्या ग़रज? मैं अपने काममें इस तरह व्यस्त रहता हू कि विषयके बाहर मुझे किसी कामसे दिलचस्पी नहीं होती।

एक दिन जब लम्बी परेशानीके बाद घर लौटा, मुझे अपनी पत्नीका दर्दभरा पत्र मिला। कितनी ही जली कटी बातोंके बाद उसमें लिखा था —"मेरे प्यारे! तुम कितने निठुर हो? दो वर्ष हो गये, मैंने तुम्हारी सूरत तक

नहीं देखी। रात दिन कटी मछलीकी तरह तड़पती हूँ। यदि तुम एक हफ्तेके अन्दर आकर मुझसे न मिले तो मैं जहर खालूंगी या कुए मे कूद कर मर जाऊंगी। तुम्हारा वियोग अब नही सहाजाता। पपीहेकी तरह उडकर चले आओ।"

पत्रने मेरे दिलमे बिजलीके करेंट जैसा काम किया। सारा बदन झन-झना उठा, कुछ गुदगुदी भी हुई। पत्नीका भोला चेहरा आखोके सामने आसू बहाने लगा। कहीं वह आत्महत्या न करले। घर जाना जरुरी है और दो वर्ष भी तो हो गये!

बडे दाव पेंचसे दफ्तरसे एक महीनेकी छुट्टी मिली। मैं विस्तर बाधकर कलकत्तेसे चला दिल्ली। दिल्लीके लाल किलेके पास ही मेरा शाति-निकेतन है। उसमें रहती है मेरी पत्नी और बूढे मा-बाप। खुशनुमा छोटा-सा घर है। सामने लाल किलेकी तबीयत फडका देनेवाली सीनरी और पिछवाड़े खूबसूरत जामा मस्जिद।

मैंने दिल्लीमेलमे सेकेण्ड क्लासकी सीट रिजर्व कराई और गाडी छूटनेके आध घटा पहले ही हवड़ा स्टेशन जाकर डट गया।

गाड़ी छूटनेमे काफी देर थी। बहुतसे मित्र मुझे विदा करनेके लिये स्टेशनपर आये थे। फूलोके गुच्छो और सुगन्धित हारोसे मैं लाद दिया गया। हम प्लेटफार्मपर खड़े मित्रोसे गपशप कर रहा था कि मेरे डिब्बेमे एकाएक पाचसात हसीन युवतिया घुस गयी। उनके साथ ही तीन आधुनिक ढङ्गके आदमी थे। एक कुलीके सरपर नये जमानेका सामान लदा था। मैंने देखा—मेरे सामनेकी रिजर्व सीटपर गद्दा बिछा दिया गया है, ऊपर दूध जैसी सफेद चादर। सामान भी यथास्थान रख दिया गया।

चटपट सबलोग बाहर निकल आये और आपसमे आनन्द भरी बातें करने लगे। बीच-बीचमे कहकहे भी उडाये जाते थे। मैं सन्नाटेमे आ गया-मामला क्या है।

गार्डने सीटी दी। मैं सबको गुडबाईकर गाडीमे चढा और खिडकीसे झाकने लगा।

हसीनोंके हुजूमसे, जो एक निहायत हसीन और चुलबुली थी, डब्बेमे चढ आयी। गाडी चल दी उसने रेशमी रुमाल हिलाकर "चेरियो" कहा। उधरसे भी रुमाल हिलाये गये और "चेरियो" की आवाजें आयीं। गाडी प्लेटफार्म छोडकर आगे बढी।

(२)

अब गाडीकी रफ्तारमे कुछ तेजी आ गयी। वह बडे इतमीनानसे अपनी सीटपर जा बैठी। चमडेका बक्स खोला और उसमेसे एक पुस्तक निकाल आरामसे पढने लगी। उसने न मेरी तरफ देखा, न मैंने उसकी तरफ। वह पुस्तक पढ रही थी और मैं अपनी पत्नीसे मिलनेकी सुनहरी कल्पनाकर रहा था। वह विरह व्यथासे जरूर सूखकर काटा हो गयी होगी। उसका किसी बातमें जी न लगता होगा। माकी फटकारें उसे कडवी मालूम होती होंगी। पिताजी भी अवश्य किसी न किसी दिन झल्ला उठते होंगे।

सर घूमने लगा। लेटनेकी तबीयत हुई, पर न मालूम क्यों लेट न सका। कनखियोंसे उस नाजनीकी तरफ देखा। वह पढनेमें इस तरह मशगूल थी कि उसका सारा ध्यान पुस्तकके पेजोंमें चिपका था। कोई हिन्दीकी पुस्तक थी—शायद "आकर्षण शक्ति"

## दिल्ली मेल में

गाड़ी तेज रफ्तारसे दौडी जा रही थी। लिलुआ, बेलूर, वाली,— न मालूम कितने स्टेशन छोडतो हुई। मैंने खिडकीसे झाककर देखा, रातके सूने अन्धकारमे वसती हुई दिल्ली मेल तीर जैसी उड़ी जा रही है। एकाएक इञ्जिनकी एक चिनगारी खिडकीके पास आ गिरी। कहिये भाग्य अच्छा था, वर्ना चिनगारी आखमे घुसकर सारी रोशनी खत्मकर देती। उठकर मैंने खिड़की वन्दकर दी। वह मजेमे वैठी पुस्तक पढ रही थी। हवाके झोकेसे उसकी रेशमी साडो फर्राटेसे उड़ रही थी। पर उसका पुस्तकके पेजके सिवा किसी तरफ ध्यान न था। वह कभी एकाएक मुस्कुरा उठती, कभो आश्चर्यसे दातोतले उगली दबाती। लगभग दो ढाई सौ मील पार हो गये। पर उसने न मेरी तरफ देखा, न मैंने उसकी तरफ। अब जरूरतसे ज्यादा मेरा जी घबडाने लगा। वातचीतके लिये डब्बेमे कोई मर्द मुसाफिर नहीं कि समय काटू। इस हसीनसे कैसे बोलू, क्या कहू? पेचीदा समस्या थी। अन्तमे जी कडा करके मैंने उससे कहा—"देवीजी! यदि आप क्षमा करें तो मैं आपसे कुछ कहू।"

उसने तेज नजरोसे मुझे घूरा। गोया खा जायगी। फिर बोली—"हा, हा, शौकसे कहिये। क्या बात है?"

मैंने कहा—"कुसूर माफ हो। मुझे गाडीपर चढने की इस कदर जल्दी थी, कि घरसे किताबें लाना भूल गया। यदि आपके पास कोई फालतू पुस्तक हो, तो मुझे दीजिये। कुछ पढनेकी इच्छा है।"

वह बोली—"हा, हा, शौकसे पढिये। मेरे पास कई पुस्तकें हैं। कौन सी चाहिये?"

उसने चमड़ेकी सन्दूक खोल कर मेरे सामने रख दी। मैंने गोर्कीकी छोटी छोटी कहानियोंका एक दुबला पतला संग्रह उठा लिया।

वह बोली "अगर और किसी की जरुरत हो तो ले लीजिये। कहा जायगे आप?"

मैंने कहा—"दिल्ली। और आप?..."

वह बोली—"मैं भी दिल्ली जा रही हू। अच्छा है, साथ हो गया। क्या करते हैं आप?"

मैंने कहा—"इजीनियर हू।"

उसने पूछा—"दिल्ली आप क्यो जा रहे है।"

मैंने कहा—"वहा मेरी पत्नी है। मा बाप हैं। और आप . ?"

वह—"दिल्ली मेरा खास वतन है। फादर एक ऊचे दर्जेके फिलासफर और प्रोफेसर हैं। भाई कलकत्ता यूनिवर्सिटीमें पढते हैं और मैं एम० ए० की परीक्षा की तैयारिया कर रही हू।"

मैं पुस्तक लेकर अपनी सीटपर आ बैठा। दिमागमे इस समय भी पत्नीकी चिता घुसी थी—वह जरूर दुबली हो गयी होगी। खाना पीना भी छूट गया होगा।

उसने महीन क़ाजल लगीं आखोंसे मेरी तरफ देखा और बोली—"आप क्या सोच रहे हैं?"

मैंने कहा—"कुछ नहीं। योही कल्पनाके आसमानमे उड़ रहा हू आपका नाम?"

"सध्या"—उसने कहा।

आह ! कितना सुन्दर नाम था। सावला, भोला और प्यारा !

मैंने कहा—"इतना सुन्दर नाम !—यह रूप !—नवजवानीकी उम्र !—अकेले रेलमे सफर करनेसे डर नही मालूम होता ?"

सध्याने निर्भीक स्वरमे कहा—"भय मनुष्यका सवसे बड़ा दुश्मन है। खासकर महिलाओको तो कभी डरना ही न चाहिये !"

मैं सोचने लगा—एक मेरी स्त्री है, ज़रा जरासी वातपर कापती है। रेल सफरकी कौन कहे, दो कदम सड़कपर चलनेमे भी डरतो है। इसलिये कि कहीं कोई उसके रूप पर हमला न कर वैठे। एक यह स्त्रो है, इतना रूप !—आफताव जैसा हुस्न !—वीस इक्कीसको उम्र। न किसी वातका डर, न शका। वुलवुल जैसी चहक रही है !

सध्याने मुस्कुराकर पूछा-"आप क्या सोच रहे है ?"

मैंने कहा—"अपनी स्त्रीकी वात। बेचारी मेरे वियोगमें पागल हो रही है। खाना पीना छोड़ दिया है उसने !"

"यह सब कल्पनाकी वातें है !"-सध्याने कहा—"कोई किसीके लिये पागल नहीं होता। कैसी स्त्री, कैसे माता—पिता ! दुनियामे कोई किसी का नहीं। सब माया है, ममताकी धूप-छाह !"

मैं उसकी फिलासफीपर दङ्ग रह गया। सोचने लगा—कितनी विद्वान है यह सुन्दरी ! उसकी प्रत्येक वातोमे, प्रत्येक शब्दमे, वोलचालके तरीकोमें इतना अधिक आकर्षण था कि मैं अपनेको भूलने सा लगा। यह भी भूलने लगा कि मैं दिल्ली मेलमे किसी विशाल पक्षीके पैरोंपर सध्याके साथ वैठा हुआ किसी अज्ञात देशकी ओर उड़ा जा रहा हू।

सध्याने कहा—"मैं देखती हू आपमे चिन्ता शक्ति अधिक है। खूब

सोचते है, खूब कल्पना करते हैं। पुरुष हैं न इसलिये। मर्दोंमें सबसे बडी कमजोरी यह होती है कि वे भविष्यकी कल्पनायें खूब करते हैं, पर वर्तमानकी तरफ नजर भी नहीं डालते।"

"और आप स्त्रिया ?—"—मैंने पूछा।

सध्या—"हम स्त्रियोका सबसे बडा जादू यह है कि हम वर्तमानकी उलझनें सुलझाती है। जो आखोके सामने है वही सत्य है, आनन्द है। बाकी सब मिथ्या, मायाजाल !"

मैंने कहा—"मैं इस समय आपकी आखके सामने हू। आप मुझे क्या समझती हैं ?"

सध्या—"आप मनुष्य भी नहीं, देवता भी नहीं। किन्नर भी नहीं हैं, गधर्व भी नही। मैंने सोच विचारकर देखा है आप मेरे जीवनके अनन्य सखा, घनिष्ट मित्र और ससारकी सबसे प्यारी वस्तु हैं।"

ओफ !—सध्याकी बातोसे मुझे ऐसा मालूम हुआ कि वह महान चुम्बक शक्ति है। और मैं लोहा,—बहुत कुछ अपनेको सम्भालनेपर भी उसकी तरफ खिचा जा रहा हू। जीवन की समस्त शक्तिशाली ताकतें सचयकर बोला---"सध्या ! तुम्हारे मुहसे यह बातें शोभा नहीं देतीं। रातके बारह बजे हैं। आराम से सो जाओ।"

सध्याने भावुकताके साथ कहा---"यदि आपके साथ कुछ दिनो पहले परिचय हुआ होता, तो कितना आनन्द आता ? कितना सुख · · आओ मेरे नजदीक बैठ जाओ।"

मैं यन्त्र-चालित पुतलीकी तरह अपनी सीटसे उठ खडा हुआ और लड-खडाते हुए सध्याकी सीटपर जा बैठा।

सध्याने कहा--"ससार कुछ नहीं, सिर्फ़ जीसे है।--मायाका परदा, मोह का सुनहरी जाल, आशाओंका रगीन गुलदस्ता कितना अच्छा होता यदि हम तुम कपोत कपोतीकी तरह सुनसान वनमे अठखेलिया करते, झरनोंके शीतल जलमें तैरते और सुन्दर फूलकी तरह किसी लता गुच्छमे खिले होते?"

सध्याने धीरे धीरे मेरा हाथ अपनी मुट्ठियोमे दबा लिया,--दबाती गयी और बोली--"जो आखोके सामने है, वही सत्य है, सुन्दर है, बाकी सब मिथ्या कल्पना, मायाका सुनहरा जाल!"

मेरे शरीरमे तेज सनसनी दौड़ने लगी ऐसा जान पडा, जैसे भयानक बम विभ्राट हुआ हो। फौरन हाथ छुडाकर बोला--"यह क्या करती हो? कुमारी युवती हो। तुम्हे सोच समझकर चलना चाहिये। दुनियामे कदम-कदमपर काटे बिछे है।"

सध्याने कहा--"सब सोच लिया है, सब समझ चुकी हू। सैकडोकी सोसायटीकर चुकी, हजारो पुस्तकें पढ डाली--सबमे यही साराग मिला,--जो आखके सामने है, वही सत्य है, सुन्दर है। बाकी सब मिथ्या, मायाका सुनहरा जाल!"

मैंने कहा--"अब सो जाओ। रात बहुत बीत गयी है।"

सध्या भावुकताके उन्मादमे बोली--"बस, आजकी रात--सिर्फ आजकी रात। कितनी मनोहर, आकर्षक और कवित्वमय है! कल दिल्ली आ जायगी और हम विराट जन कोलाहलमे एक दूसरेसे बिछुड़कर कहा चले जायेंगे, कोई नही जानता!"

मैंने कहा--"छि., तुम क्या कहती हो! मैं तुम्हारा कोई नहीं हू। तुम व्यर्थके लिये अपनेको मोह-पाशमे बाध रही हो।"

सध्याने कहा--"मोह, माया, स्त्री और पुरुष। मैं डिक्शनरीके प्रत्येक शब्दोकी व्याख्या करना जानती हूँ। मैंने समस्त समुद्रोका मथनकर एक ही तत्व पाया है,--जो आंखोके सामने है वही सत्य है, सुन्दर है। बाकी सब मिथ्या, मायाका सुनहरी जाल।"

मैं-"सो रहो तो अच्छा है। क्या नींद नही आती?"

उसने मद भरी आखें संचालितकर कहा—"मेरा नाम है संध्या। रात मेरी सहेली है। उसके साथ कभी होली खेलती हूँ, कभी हिंडोलेपर झूलती हूँ। क्या आपको झपकी आ रही है?"

"जी हा"- मैंने कहा।

सध्या बोली—"मेरी कोमल भुजाओमे मस्तक छिपाकर सो जाइये। देखिये, आज आपको कितनी मीठी, नशीली और रहस्य भरी नींद आती है।"

सरमें चक्कर आने लगा। बदनमे चारो तरफ सनसनी फैलने लगी। उठकर लड़खडाता हुआ अपनी सीटपर चला आया।

सध्या भी मेरे साथ आयी। नजदीक बैठ गयी और मधुर स्वरमें बोली—"जरा उठिये, आपका बिस्तर साफ कर दू। रेलका तमाम कोयला उड़उडकर आपके बिस्तरेमे बिखर रहा है।"

मैं मिट्टीके पुतलेकी तरह उठकर खड़ा हो गया। उसने मेरा बिस्तर झाड़ा, गर्द साफ की। फुर्तीसे ट्रंक खोला, खुशबू भरी चादर निकाली और आदरके साथ चादर बिछा दिया। उस समय दिल्ली मेल प्रकृतिके भयानक अन्धकारको चीरती फाडती तूफान जैसी उडी जा रही थी। ऐयाश दिल दिल्ली की ओर, जहा मुगल बादशाहोंने बिहिस्तके मजे ले लेकर अपने जीवनका सर्वनाश किया था! मुगल सम्राज्यको पतनकी भट्टियोमे झोका था!

मोगलसराय निकल गया। विन्ध्याचल और मिर्जापुर भी छूट गये। इलाहाबादका स्टेशन नजदीक, दस बजेनेका समय और मैं नींदमे बेहोश !

सध्याने मेरे मुहपर पानीके छींटे मारे। मैं सकपकाकर उठा। वह बोली—"उठिये, हाथ मुह धो डालिये। इलाहाबादमे हम चाय और कुछ फ्रूट्स खरीदेगे।"

मैंने हाथ मुह धोया। इलाहाबाद जकशन आ गया। हमने एक साथ बैठकर चाय पी—मीठे और खट्टे फल चखे।

सध्याने कहा—"यही तो मनुष्य जीवन है। एक दूसरेसे मिलकर खेलें, कूदे और आनन्द भरी रङ्गरेलिया करें। यही तो ससार है, यही तो जीवन ! और सब फिजूल--मायाका सुनहरा जाल।"

मैंने कहा--"तुम मुझे भूल जाओ। मैं तुम्हारा कोई नहीं। तुम भूलती हो।"

सन्ध्या मुस्कुराकर बोली-"न मैं भूलती हू, न भ्रममे हू। जो कहती हू, सच कहती हू। आप मुझे शायद रहस्यमयी युवती समझते हों, किन्तु मैं कुछ नहीं हू। मेरा परिचय है--सिर्फ सध्या। वह सध्या, जो बडी मनोरम आकर्षक और आखोको सुख देने वाली है।"

मैंने कहा--"ठीक है। तुम भी सुन्दर, तुम्हारा नाम भी सुन्दर !-किन्तु सन्ध्या ! यह भी ठीक है, मैं तुम्हारा कोई नहीं हू। आजके पहले मैंने तुम्हे कभी देखा भी नहीं, कभी तुम्हारी कल्पना भी नहीं की।"

सध्या-"अब देख लो, पहचान लो, कल्पनाकर लो। तुम मेरे अपने हो मेरे जीवन सर्वस्व हो।"

वह मिठास भरी नजरोंसे मेरी ओर देखने लगी। उसकी आखोंमें उन्मत्तताका नशा था, मोहका जादू, वासनाकी माया !

कानपुर छूट गया। आगरा और अलीगढके स्टेशन भी एक एककर पार हो गये। दिल्ली मेल तेज रफ्तारसे दौडी जा रही थी। वह कवित्वमय बातोंसे मुझे अपनी ओर खींच रही थी और मैं उससे दूर-बहुत दूर भागनेके लिये छटपटा रहा था।

सन्ध्या बोली—"दिल्ली अब आना ही चाहती है। आगे गाजियाबाद है, फिर शाहदरा, बादके दिल्ली जकशन। चन्द मिनटोंका और सफर है। एक बात कहूं, मानोगे ?"

मैंने कहा—"कहिये।"

सन्ध्याने फूल बरसाते हुये कहा—"दिल्लीमें आप मेरे मेहमान बनें अतिथि और भगवानके बराबर। मैं कुछ दिनों आपकी सेवा करूंगी।

मैंने कहा—"अपने पिताजीसे मेरा क्या परिचय दोगी ?"

सन्ध्या--"यही कि यह मेरे जीवन साथी हैं। इस और परलोकके परम मित्र। पिताजीको कोई अबजेक्शन न होगा। वे दकियानूसी ख्यालोंके नहीं इस जमानेके सबसे ज्यादा एडभास व्यक्ति है।"

मैं नीची नजरकर कुछ सोचने लगा। सन्ध्याके आगे आखें उठानेकी हिम्मत न पडी।

गाजियाबाद भी छूट गया—शाहदरा भी। दिल्ली मेल मन्द गतिसे जमुना पुलपारकर रही थी। यह लीजिये, लाल किला आ गया। मेरा छोटा सा खुशनुमा मकान भी। ओह ! मेरी स्त्री—मेरे माता-पिता—और अब ? दिल्ली जकशन !

प्लेटफार्म नरमुण्डोंसे भरा था। दिल्ली मेल चीटीकी तरह रेंग रही थी। मैं खिड़कीसे झाककर देखने लगा। मुझे लेनेके लिये स्टेशनपर पिताजी तो नहीं आये !—मेरी बीबी तो कहींसे नहीं झाक रही है !

# रुपया शैतान है

---

ससारमे चाहे कोई अनाथ हो या सनाथ, पर लालविहारीके आगे पीछे कोई न था। जन्म लेते ही उसकी मा मर गयी थी। दस वर्ष बाद पिता भी ससारमे चल बसे थे। शादी उसनेकी नहीं। बारह वर्षकी उम्रमे वह एक धनी व्यापारीके यहा नौकर हो गया। बचपनसे ही उसका जीवन सघर्ष मय था। पर वह आजकलके आदमियोंकी तरह न तो विद्रोही बना, न देशभक्त।

वह गाय जैसा सीधा और पत्थर जैसा कड़े दिल का था। ईमानदारी उसकी रग रगसे फूटी पड़ती थी। परोपकारमे वह हमेशा अपनेको समर्पित किये रहता। उसका काम था, सेठजीके फार्मका तकाजा वसूल कर खजानेमें रुपये जमा करना। इस समय उसकी उम्र तीस वर्षकी थी। करोड़ो रुपये वसूल किये उसने, पर क्या मजाल आजतक एक पाईकी भूल हुई हो। सेठ जी उसे अधिक चाहते, मुहल्लेके लोग कहते—"यदि आदमी हो तो लालविहारी जैसा। इसान नहीं देवता है। बैंकोंमे, व्यापारी फर्मोमे, और लेन देनकी गद्दियोंमे लालविहारीकी ईमानदारीकी अच्छी शोहरत थी और हर आदमी उसे श्रद्धाकी निगाहोंसे देखता था।

उसे कई लोगोने भडकाया, तनख्वाहके अलावा कुछ ऊपरी भी पैदा किया करो। आजकल बगैर रुपयेके दुनियामें इज्जत नहीं। पर लालविहारी

उनकी बातें हँसीमे उडा देता। कुछ लोगोने उसकी ईमानदारोका इम्तहान भी लिया, वह खरा सोना निकला।

वह बीस रुपये माहवार पर अपनी गुजर करता। अकेले जीवनके लिये उसे इतने रुपये काफी थे। हा, यदि वह चाहता तो उसे सैकडो नौकरिया मिल जातीं। वह आज सौ सवासौ रुपये महीनेसे कम न कमाता होता।

किन्तु दुनियामे रुपया ही सबसे बडी चीज नही है। ईमामदारी और मनुष्यताकी कीमत रुपयोसे ज्यादा है।

( २ )

दो पहरका समय था। लालबिहारी पचास हजारकी चेकका कैश भुगतान लेकर घर लौट रहा था। एकाएक उसका कलेजा धड़कने लगा। पैरोमे कुछ भारीपन बोध हुआ और सोचने लगा—मैं क्यों न रूपये लेकर भाग जाऊ ? मुझे भी तो बड़े आदमी बननेकी जरूरत है। शादीके लिये कई दिनोसे सोच रहा हू। कोई हसीन और फूल जैसी औरत मिले तो सोनेमे सुगन्ध। रहनेके लिये एक अच्छा मकान और खूबसूरत बगीचा भी जरूरी है।

उसने यह सोचा और कदम बदल दिये। अब वह गद्दीकी तरफ न जाकर एक अनिश्चित मार्गकी ओर बढने लगा निरुद्देश्य और चंचल जैसा। उसके जीवनमे रुपये हजमकर जानेकी एक विचित्र आँधी आ गयी और क्षण भरमे ही एक सूने बगीचेकी बेंचपर जा बैठा!

उसने कमर टटोलकर देखा—पचास हजार रूपये ज्यो के त्यों सुरक्षित हैं। वह मन ही मन मुस्कुराया और आसमानकी तरफ देखने लगा।

सफेद बादलोंके हल्के टुकड़े तेजीके साथ उड़े जा रहें थे।' उसने सोचा, मैं भी क्यों न इन्हीं बादलोंमें समाकर उड़ जाऊं। शहरमें रहनेसे आफत ही आफत है। यदि मैंने रात तक रुपये गद्दोमें जमा न कराये तो गजब हो जायगा। लोग मुझे ढूंढने निकलेंगे। थानेमें भी खबर दी जायगी और मैं जरूर गिरफ्तार कर लिया जाऊंगा।

इस वहमसे उसके मनमें वेष बदलनेकी सनक सवार हुई। बदले हुये वेषमें मुझे कोई न पहचान सकेगा। उसने चुपचाप कमरसे पचीस रुपयेके नोट निकाले। शहतीरकी तरह उठ खड़ा हुआ तिरहट्टी बाजारमें लम्बी दाढी खरीदी। रेशमी कुर्ता और लखनवी पाजामा मोल लिया। अब वह झपटता हुआ इडेनगार्डन पहुंचा और चार बजे शामको वहां से बनकर निकल पड़ा—आधा हिन्दू और आधा मुसलमान। उसे इस वेषमें पहचानना मुश्किल था। उसकी लम्बी दाढी बड़े मार्केकी थी और वह दूकानोंमें लगे हुए बड़े बड़े आइनोंमें अपनी शक्ल देखकर पेटमें मुस्कुरा रहा था।

तीन दिन इसी तरह बीते। चौथे दिन उसने एक समाचार पत्रमें छपा देखा—

"५०००) रुपये इनाम !

मेरा गुमास्ता लालबिहारी पचास हजार रुपये लेकर भाग गया है। रङ्ग गेंहुआ, कसा हुआ बदन, तेज आखें और माथे के ठीक बीचोबीच घावका एक अंगुल चिन्ह है। जो कोई उसे गिरफ्तार करा देगा—उसे उपरोक्त इनाम दिया जायगा।"

लालबिहारी यह पढते ही घबरा गया। सब ठीक है, पर माथेके घाव

का चिन्ह कहा छिपाऊं ? अब मुझे जरूर पुलिस पकड़ेगी। सब आदमियोंने भी यह खबर पढ ली है, अब मैं बगैर गिरफ्तारीके न बचूंगा। उसका कलेजा धड़कने लगा, आखोंके आगे अन्धेरा छा गया। ऐसा मालूम होने लगा, जैसे रास्तेके चलते फिरते आदमी पुलिसके जासूस हैं और वे मुझे गिरफ्तार करनेकी फिक्रमे घूम रहे हैं।

क्या करूं, कहा जाऊ ?

वह कापते पैरोंसे जल्दी जल्दी मेट्रो सिनेमाके पास आया। तीन बजे का खेल शुरू होने को था, उसने सोचा। अंधेरेमे समय कट जायगा। वेष भी बदले हूँ, कोई भी मुझे नहीं पकड़ सकेगा।

और वह टिकट कटाकर घुस गया मेट्रो सिनेमाके अन्दर अंग्रेजी खेल था, खाक पत्थर कुछ समझमे न आया। वह इस फिराकमे था,—कि कहा भाग जाऊ ? दुनियामे उसका कोई भी अपना नहीं है। गद्दीमे वापस जाना खतरेको मोल लेना है। खैर, जब चोरीका कलक लग चुका,—तब मैं चोर सही, डाकू सही, शैतान सही!

उसके दिलमें भूकम्प जैसे धक्के लगने लगे। किसी तरह खेल खतम हुआ और वह दर्शकोंकी नजरोंसे अपनेको बचाता हुआ गङ्गा तटके अन्धकार मे समा गया।

उस समय कोई जहाज भी छूटनेको न था। घबराहटकी मुसीबतनें रातके ग्यारह बज गये। स्टेशनसे कोई रेल भी छूटनेको न थी। क्रमशः चारो तरफसे सन्नाटा झुकता आ रहा था और रास्तेसे आदमियोका आवागमन भी बन्द हो रहा था।

अब वह क्या करे, किसका सहारा ले ? रात को उसे इस तरह बेकार घूमते देख पुलिस पकड़ लेगी। उफ, तब तो भयानक भण्डाफोड़ हो जायगा !

वह दिलमें सैकड़ो तूफान लेकर रास्तेमें चलने लगा। उसकी इच्छा हुई, गङ्गाजीमें कूदकर जान दे दे। सड़कपर लेट जाऊं और पत्थरोंसे भरी लारी मेरी छातीके ऊपरसे निकल जाय। अकस्मात उसकी नजर एक कोठे पर जा पड़ी। बिजलीके झकझकाते प्रकाशमें एक षोडशी बाला बरामदेपर बैठी है। बड़ी हसीन है वह। लालबिहारीसे उसकी चार आखें हुई, उसने इशारेसे लालबिहारीको ऊपर बुलाया। लालबिहारी बेधड़क मकानमें घुस गया और उस सुन्दरीके कमरेमें हो रहा। सुन्दरीने आदरसे उसका स्वागत किया। उस औरतके सिवाय वहा कोई दूसरा न था। लालबिहारीने सन्तोषकी सास ली। अब कौन गिरफ्तार करेगा मुझे ?

जान बची लाखो पाये।

सुन्दरी वेश्या थी। पर लालबिहारीने नहीं समझा कि यह वेश्या है। और समझे भी क्यों ! वह कभी वेश्याके यहा गया भी तो नहीं। उसने सोचा यह भी मेरी तरह अकेली है। और दुनियामें इसका भी कोई अपना नहीं है।

उसने घाव का चिन्ह छिपाते हुये चारो तरफ नजर दौड़ाकर देखा—यहा वह समाचार पत्र तो नहीं है, जिसमें मेरी गिरफ्तारीके इनामकी सूचना छपी है। हा ठीक है। वहा कोई अखबार न था। वेश्याके पूछने पर लाल-बिहारीने अपना परिचय यों दिया—

"मेरा नाम महेशप्रसाद है। मैं मुजफ्फरपुरका मालदार जमीदार हू। शादी मैने अब तक नही की। कल सुबह मुजफ्फरपुर चला जाऊंगा और एक हफ्तेमें लौटूगा।"

वेश्याने कहा—"मेरा नाम कनक है। मैंने भी अब तक शादी नहीं की। भगवानने घर बैठे जोडी मिला दी। अच्छा हो, आप मेरे साथ शादी कर ले। दोनोकी जिन्दगी आरामसे कटेगी।"

कनकने यह बात कह तो दी—पर लालबिहारीकी लम्बी दाढीसे उसे बडी घृणा हुई।

"मैं भी यही चाहता हू।"—लालबिहारीने कहा—"तुम मेरे साथ शादी कर लो। दुनियामें मैं भी अकेला हू और तुम भी। मैं बहुत थक गया हू, सोनेके लिये जगह बताओ और पीनेके लिये एक ग्लास पानी दो। सबेरे तुमसे बहुत सी बातें करूंगा"

कनकने उसे पानी पिलाया और सोनेके लिये आरामकी जगह दी। लालबिहारी पड रहा और कुछ ही देर बाद खुर्राटे लेने लगा।

कनक भी बत्ती गुलकर सो गयी।

लेकिन लालबिहारीको नीद न आयी। दरअसल वह गिरफ्तारीसे बचने के उपायोका आविष्कार कर रहा था। जब कनक सो गयी, वह चुपकेसे उठा। कमरसे पचास हजारके नोट निकाले और उन्हे चादरमे मजबूतीसे बाधकर अपना कुरता लपेट दिया। जब गठडी बध गई, वह बेफिक्र हो गया और उसे अपने सिरहाने रखकर प्रात.काल की प्रतीक्षा करने लगा।

( ३ )

सुबह उसने रुपयोकी गठडी कनकके हाथोमे सौंपते हुये कहा—"यह मेरे

कपड़े है। शादीके चिन्ह स्वरुप तुम इन्हे अपनी सन्दूकमें छिपाकर रख दो। मै आज दोपहरकी गाडीसे मुजफ्फरपुर जा रहा हू। हप्ते भरके अन्दर हजारो रुपये लेकर लौटूगा और तुम्हारे साथ शादीकर नयी जिन्दगी बिताऊगा।"

कनकने गठरी ले ली और लालबिहारी उसके घर से निकल पड़ा!

अब वह जरुरतसे ज्यादा खुश और लापरवाह था। रुपये तो उसके साथ थे नहीं, डर किस बातका? किन्तु वह रास्तेमें चलता था चौकन्ना इधर उधर सन्देहकी निगाहोंसे देखते हुये। वह इस समय भी राहगीरोंको जासूस समझता था, ज्योंही सडकके चौराहेपर आया—उसकी एक दुबले पतले आदमीसे टक्कर हो गयी। और नकली दाढीका एक भाग खुलकर उसके चेहरेपर लटकने लगा।

मोड़पर पहरे वाला खडा था। आदमीने पुकारा—"सिपाही!"

सिपाहीने दौडकर उसे फर्शी सलाम किया।

"गिरफ्तार कर लो बदमाश को"।—उस आदमीने सिपाहीसे कहा—"हथकड़िया मेरे पास है।"

और उसने लालबिहारीके हाथोंमें लोहेकी काली हथकडिया पहना दी। लालबिहारीने भागनेकी कोशिश की—पर पुलिसके हाथमे आया हुआ चोर कब अपनेको छुड़ा सका है?

तीसरे दिन अदालतमें मुकदमा चला। अभियोग था पचास हजार रुपये हड़प जाना। लालबिहारीने बयानमें कहा—"मेरा कोई कसूर नहीं है। मैं बैंकसे रुपये लेकर टहलने चला गया था। ठण्डी हवा थी, बेच-

पर सो गया। जागनेपर मालूम हुआ—रुपयोंकी थैली गायब है। मैंने सर पटका, आंसू बहाये, ढूंढा, पर पता कुछ न लगा। कई दिनोंसे चोरकी तलाशमें घूम रहा था कि पुलिसने पकड़कर जेलखानेमें बन्दकर दिया!"

मजिस्ट्रेटने उसे पांच वर्षकी सख्त सजा दे दी। अब लालबिहारी चक्किया पीसता और मूछोंपर ताव देता। जेलमें लोग नर्क यातनायें भोगते हैं, पर लालबिहारीके लिये यह बात न थी। वह दोनों वक्त भोजन करता और सुखकी नींद सोता। उसके मनमें दिन रात एक ही तरङ्ग उछलती—ओह! बड़ी खबसूरत और अच्छी मिल गयी है मुझे औरत। रुपयोंकी गठरी उसकी सन्दूकमें सुरक्षित है। पांच वर्ष समाप्त होते ही मैं उस फूलके पास भंवरा बनकर पहुंचूंगा। और पचास हजार रुपयेसे स्वर्गीय सुख भोग करूंगा। उस समय न मुझे थाना पुलिसका भय होगा, न सेठका न राह चलते आदमियोंका।

वह इसी आशापर जी रहा था। उसकी यह आशा रङ्गीन तितलीकी तरह उसकी आखोंके आगे उड़कर बदनमें मस्ती पैदा करती और हर समय हरा बनाये रहती।

धन्य है आशा। यदि मनुष्यके पास आशा न होती—तो वह बाजारमें कौड़ियोंके मोल न बिकता!

( ४ )

पांच वर्ष बाद!

लालबिहारी जेलसे छूटा। उसका स्वास्थ्य इतना सुन्दर हो गया था कि कोई भी तन्दुरुस्त आदमी उसे देखकर ईर्षा कर सकता था।

उसने नाईके पास बैठकर हजामत बनवाई और अपनी पुरानी पोशाक पहनकर चला कनकके पास।

वह पैदल ही चल रहा था। आशाकी सुनहरी लहरोंसे उसका चेहरा चमक उठा था। उत्साहकी चचल तरङ्गोंने उसके जीवनकी सारी कालिमा धो दी थी। प्रेमके मीठे तरानोंने उसे मनुष्य बना दिया था, मनुष्य ही नहीं, बल्कि देवता, कुछ देवताओंसे भी ऊँचे।

वह बड़े उत्साहसे उस जगह आया, जहा कनकका मकान था।

किन्तु यह क्या?—मकानकी जगह आज मैदान नजर आ रहा है। ईंटों और कंकड़के टुकडोंसे जगह लदी है। पूछनेपर मालूम हुआ—यह मुहल्ला इम्प्रूवमेंट ट्रस्टने तोड दिया है। वेश्याओंके मकान उजाड़ दिये गये। कनक कहीं चली गयी!

कहा गयी?—किस ओर गयी?—लाख सर पटकनेपर भी लालविहारी कुछ पता न पा सका। उसका दिमाग खराब हो गया। पागलों जैसी हालत हो गयी। शरीरका सारा रक्त पानी हो गया और उसे पेचिसकी बीमारी शुरु हो गयी।

वह रास्तेमें जानवरोंकी तरह चीखने और पागल कुत्तेकी तरह आदमियोंको काटने दौड़ने लगा। छोटे छोटे लड़के उसे ढेले मारते। वह कराहता, रोता और दुनियाको दुश्मनके रूपमें देखता था।

वह महीनों नर्क यातनायें भोगता रहा। एक दिन राहगीरोंने देखा—उसकी लाश फुटपाथके परनालेके पास पड़ी है। उसकी आखोंकी भयानकतायें नीले आसमानकी ओर ताक रही हैं और मारे बदबूके भले आदमियोंकी

# साहित्यिक-विपत्ति

यह बात ससार प्रसिद्ध है कि मैं एक महान कहानी लेखक हू। मेरी कहानियोंके आगे गोर्की झक मारते है, मेरो कारेली पानी भरती है, मोपासा हुक्का गुड़गुडाते है। अजीव होती हैं मेरी कहानिया। जो पढता है मस्ती से झूमता है और उसका मन एक रहस्यमय नशेसे मतवाला हो जाता है।

ससारके सबसे बड़े पत्रोमे मैं कहानिया लिखता हू। आप यह सुनकर आश्चर्य करेंगे कि मैं अपनी कहानियोंके लिये सम्पादकोंसे रुपये नहीं मागता याने पुरस्कार नहीं लेता। यदि किसीने झोंकमे आकर कुछ भेज दिया तो सहर्ष स्वीकारकर लेता हू। मुझे गौरव है कि वर्तमान भुक्खड़ोंकी तरह मैं रुपयोंका भूखा नहीं हू।

इस समय मेरी उम्र पैंतालिस वर्ष की है। पर यदि आप देखे तो पच्चीसवर्षका पठ्ठा समझें। खैर, मेरी उम्रसे आपको क्या दिलचस्पी ?

मैं चालीस वर्ष तक क्वारा रहा। इन दिनों मैं पहलवानकी तरह सड़कों पर मस्त घूमता रहा। मनुष्योंके चेहरे ताड़े, दुख सुखके मजे लूटे और न मालूम क्या-क्या किया। मेरे शरीरमे विद्रोहकी बारूद भरी है जिसकी सृष्टिकी है—मेरे कर्जदारोंने, धनी राक्षसोंने, और समाजके लफगोंने।

सोचा था, कभी शादी न करूंगा और योंही बमका गोला बना फाके

मस्तीमें चक रहूँगा। पर एक ऐसी विचित्र घटना घटी कि मेरा सारा प्रोग्राम नष्ट हो गया !

पडोसमे एक युवती रहती थी। बापके पास पैसेकी तङ्गी थी। अब तक शादी न हुई थी। ताक झाकमे उसके साथ मेरा प्रेम हो गया। दोनो एक दूसरेके लिये बेचैन हो उठे। लोगोने कहा—शादीकर लो, झञ्झट मिटे। बात दिमागमें चढ गई और मैंने एक दिन दूल्हा बनकर उसे जीवन संगिनी बना लिया। याने जिस उम्रमें लोग सन्यासकी तैयारिया करते है, मैंने गृहस्थाश्रममे प्रवेश किया।

श्रीमती जी सुबह शाम गर्म भोजन करातीं और मुझे सर आखोपर रखती। वडा आनन्द आने लगा। उनके साथ चादनी रातके मजे, बरसातके भीगे दिनोंके स्नान और जाडे की थरथराहटका जो सुख मैंने उठाया, वह शायद ही किसी भाग्यवानको मिले। गरज यह कि साल दो सालमे हम दूध पानीकी तरह मिल गये। उन्होने मुझे पहचाना और मैंने उन्हे। वह एक वटा चार पढी लिखी थी और मैं आधेसे अधिक रुपयोका कङ्गाल !

वह एक दिन कहने लगी—"सुनो, आजकल फैशनका बाजार है। मैं मिस बनूगी। ऊची एड़ीके जूते, वर्मी छाता, गोल इयर रिंग और एक हैण्ड बेग ! वस इतने सामानसे काम चल जायगा। शामको ला दो।"

मैंने कहा—"यह मेरे बसकी बात नही। खानेको तो जुटता नही, तुम्हें फैशनका शौक चर्राया है।"

वह सुर्ख हो गयी और झनझनाकर बोली—"तुम्हारे किये कुछ न होगा। कहानियाँ लिख लिखकर खत्म हो जाओगे, पर कोई छदामको न पूछेगा।

इससे अच्छा तो यह है, पसारीकी दूकान खोल-खोल-खानेका तो अभाव मिटे।"

मैं निराश स्वरमें बोला—"पसारीकी दूकानमें दिल न लगेगा। मैं ऐसा ही चर्खा जिन्दगी भर चलाऊंगा। रुपयोंसे मुझे नफरत है।"

वह ताज्जुबमें पड़ गई और मुझे निकम्मा समझकर अन्दर चली गई! आपकी कसम!—उस दिन मुझे रात भर नींद न आयी। भूखसे जान निकलती रही। आंखोंके सामने रोटियोंके हरे, नीले, गोल, चितकबरे टुकड़े उड़ते रहे। सपनेमें पनेथियोंके ढेर लग गये!

( २ )

दिनपर दिन बीतते गये। रातपर रातें चलती गयी। वह न तो मुझसे बोलीं, न मेरे सामने आयीं। मैं भी सनकी आदमी हूं। उनकी जरा न परवाह की। होटलसे खाना खा आया। कमरेमें घुसा और अन्दरसे दरवाजा बन्दकर कहानियां लिखने लगा।

एक दिन वह तूफान गतिसे मेरे पास आयी और एक मासिक पत्र सरका कर बोलीं—"इस अखबारमें तुमने जो कमाईकी है, उससे मेरा कलेजा जल गया है। आजसे कहानियां लिखना बन्दकर दो, वर्ना प्रलय हो जायगी।"

मैंने देखा उनका चेहरा गुस्सेसे तमतमा उठा है और उनके मनमें इतना जबर्दस्त भूकम्प आ गया है कि यदि मैं उनका पति न होता तो वह मुझे जरूर तमाचा जड़ देतीं।

वह इस तरह क्यों गुस्सा थी? कारण समझमें आ गया। मैंने मासिक पत्रिकामें एक कहानी लिखी थी—"कर्कशा" उसमें मैंने स्त्री जातिकी खूब खिल्ली उड़ायी थी और उन्हें जी भर कर कोसा था।

मैंने कहा—"औरतें बेवकूफ होती हैं। मैं अगली कहानियोंमें ज्यादा खबर लूंगा और ससारको साबितकर दिखाऊगा—स्त्रीसे बढकर मूर्ख जानवर भी नही होते।"

सचमुच उनके वदनमें आग लग गयी। बोलीं—"मैं कलम तोड दूंगी दावात उलट दूंगी और कागजोंके चिथडे उड़ा दूंगी। तुमने समझा क्या है मुझे?"

"आग उगलनेसे काम न चलेगा। सुलहका रास्ता निकालो।"—मैंने कहा।

वह बोलीं—"सुलहका एक ही रास्ता है। कहानियां तुम लिखो और लेखककी जगह मेरा नाम छपे।"

मैं सन्नाटेमे आ गया। कहती क्या हैं? कहानी लिखना तो मेरा नशा है। यदि सुलहके लिये उन्हें लिखना बन्द कर दूं तो शायद जिन्दगी से हाथ धोना पड़ेगा। सोचकर बोला—"अच्छा कहानिया लिखूंगा मैं और लेखकके स्थानपर तुम्हारा नाम छपेगा। बताओ, फिर तो न लड़ोगी?"

वह पिघल गयी और नाजसे बोलीं "फिर देखना तो मुझे मारना। मैं तुम्हारी सेवा करूंगी। तुम मेरे किसी काममें त्रुटि न पाओगे।"

मैं कुछ न बोला। वह मेरे नजदीक बैठ गयीं और मुझ पर प्यारका हाथ सहलाते हुये बोली—"आमदनी भी मैं कर लूंगी। सारी तकलीफें मिट जायगी।"

बात मुझे जच गयी और हम दोनोंमें फूल पत्तीकी तरह मेल हो गया!

( ३ )

श्रीमतीजी के नाम से, मेरी लिखी कहानिया सामयिक पत्र पत्रिकाओंमें

निकलने लगीं। साहित्य संसारमें धूम मच गयी। किसीने कहा—साहित्य गगनमें ऊषा उदय हुई है। कोई बोला—चांदनी रात है। श्रीमतीजीके पास बधाइयोंके पत्रोंका तांता लग गया! कुछ पत्र सम्पादकोंने उनके फोटो भी मांगे। कुछ दूर-दूरसे मिलने आये।

मैंने जो सम्मान चालीस वर्षोंसे साहित्यमें नहीं पाया था, श्रीमतीजीने उससे चौगुना चन्द अर्सेमे ही हासिलकर लिया। यह स्त्री नामकी महिमा थी, देवी—शक्तिका चमत्कार।

श्रीमतीजीने कहानियोंके लिये सम्पादकोंसे रुपये मांगे, मनिआर्डरोंका ढेर लग गया। समालोचनाके लिये पुस्तकें मांगी—किताबोंसे घर भर गया। पोस्टमैन हर डाकमें मोटा बण्डल लाता और मेरे हाथमे थमाकर चला जाता। मैंने कहा—धन्य भाग्य हैं हमारे। स्त्री नहीं, साक्षात लक्ष्मी है। घरमे आनन्दकी दीपावली जगमगाने लगी।

एक दिन जब हम सुबहकी ठण्ढी हवा खाकर घर आये तो हमे साहित्य-सम्मेलनका एक पत्र मिला। जिसमे लिखा था :—

"सुश्री देवीजी,

थोड़े ही दिनोंमे आपकी कलम ने साहित्यिक दुनियामे हलचल मचा दी। लोग आपकी प्रतिभाके कायल हो गये। लेखकोंने लेखनी धर दी। आपसे अच्छा कोई नहीं लिखता। भविष्यमे भी कोई न लिख सकेगा।

हमारी कार्यकारिणी समितिने आपको सम्मेलनकी सभापत्नी चुना है। आशा है, आप अपने चरण कमलोंसे हमारे शहरको पवित्र करेंगी। हम आपके स्वागतकी विराट तैयारियां कर रहे हैं।

दस्तखत—

सी० आर० पांडे

मन्त्री साहित्य सम्मेलन"

मैंने कहा—"लो, पौबारह हैं। सारा ससार तुम पर फिदा है। अब लिखो सभापत्नीका भाषण! पढी-लिखी तो हो एक बटे चार। भाषण क्या दोगी ?"

वह बोली—"भाषण तुम लिख देना। पर मामला बड़ा टेढा है। उतनी भीडमें मैं भाषण कैसे दूगी ?"

मैं—"नाक कट जायगी। हाथ पैर कापेंगे, रुकरुक कर पढोगी।"

वह—"सम्मेलनको आज ही लिख दो,—देवीजीको जरा भी फुर्सत नही है। किसी दूसरेको सभापति चुनो।"

मैं—"सम्मेलनवाले न मानेंगे। वे बडे घाघ हैं। जिसे चाहते हैं, जी जानसे चाहते है। पक्षपातसे पुरस्कार दिये जाते हैं, पक्षपातसे सारा काम चलता है।"

वह—"मैं उनकी कौन हू ? जो मेरा पक्षपात करे।"

मैं—"स्त्री हो, और वह भी नयी। स्त्रीका आकर्षण जबर्दस्त होता है। जिन्दगी भर लिखते-लिखते मेरी कलम घिस गयी, पर किसीने पूछा तक नही। मैं तुम्हें सभापत्नी हर्गिज न बनने दूगा। आजसे कहानी लिखना बन्द करता हू, अब जिन्दगी भर कलम न उठाऊंगा।"

श्रीमतीजी सन्न होकर तस्वीर बन गयी!

उस दिनसे आज तक वह मुझे मनाते-मनाते थक गयी, पर मैंने कलम न उठायी—न उठायी। सम्मेलनका अधिवेशन सूना रह गया! कहानियों की दुनिया मर गयी!

यह मेरी भीष्म प्रतिज्ञा है—"जीवन भर कुछ न लिखूंगा।"

# नर्कसे ज्यादा भयानक

सुनील इस पृथ्वीका सबसे प्यारा कवि था। साहित्यिक उसे आखोका नूर मानते, राजा रईसोमे उसकी कद्र ज्यादा थी। मजदूर और अशिक्षित उसे पूज्य गुरूके रूपमे देखते और राष्ट्रीय जलसा तो कोई ऐसा न होता, जिसमे उसके गलेमें वरमाला न पहनायी जाती हो। वह जिस रास्तेसे निकलता झुण्डके झुण्ड आदमी उसके पीछे हो जाते। दुनियाका कोई ऐसा अखवार न था, जिसमे उसकी प्रशसाके गीत न गाये जाते हो। वह जितना मशहूर था उतना ही उपकारी। मतलब यह कि ससारका वह इतना सुन्दर फूल था, जिसके इर्दगिर्द हजारो भॅवरे मडलाया करते थे।

उसकी स्त्री मोहिनी बड़ी खूबसूरत थी। कोई उसे रति कहता, तो कोई रम्भा। वड़ा मधुर था उनका दाम्पत्य जीवन। दोनो एक प्राण दो देह थे। उसकी राते बडी सुहावनी थीं, दिन मनोहर। घड़ियोंमे फूल वरसते और मिनटोंमे चन्द्रमाकी प्यार भरी किरणे।

यों तो सुनील हर आदमीको प्यार करता था। लेकिन सुधीरके लिये उसके मनमे कुछ दूसरी ही भावना थी। वह समझता सुधीर देवता है। किसी कुसूरपर ही उसने मनुष्य योनि धारणकी है। सुधीरके प्रति उसका इतना अगाध प्रेम था कि वह मौके बे मौके यदि उसके प्राण भी माग वैठे तो सुनील दे दे। सुधीरमे भी वही भाव थे। वह सोचता, जिस दिन सुनील

ससारमे न रहेगा—मैं आत्महत्याकर लूगा। सुनीलसे बढकर दुनियामे मेरा कोई सच्चा दोस्त नहीं। बात भी कुछ ऐसी ही थी। न सुधीरके विना सुनीलको चैन थी, न सुनीलके बिना सुधीरको।

किन्तु ससारका सबसे विचित्र तमाशा तो यह है, कि यहा हर आदमीके दिन एक से नहीं जाते। जो आज काश्मीरके सेव और कावुलके अगूर खाता है, कल उसीको रास्तेकी धूल फाकते देखा गया है। जो आज हाथी पर चढा घूमता है, कल वही दरवदरकी ठोकरें खाता है। सुनीलके लिये भी यही बात हुई। वह सख्त बीमार हो गया। लोगोंने जमीन आसमान एक कर डाले। लाखों रुपयोंपर पानी फिर गया। लेकिन वह किसी तरह अच्छा न हुआ। मौत उसका गला दबोचे थी और उसके सिराहने देवदूत खड़ा था। उसका सुर्ख चेहरा बड़ा विचित्र था सरपर दो सींग, नङ्गा वदन और हाथमे मोटी गदा। उसने आकाशकी ओर उङ्गली दिखाते हुये कहा—"मेरे साथ चल!"

सुनील भयसे चीख उठा। कापती आवाजमें बोला—"मैं और तुम्हारे साथ चलू।—असम्भव!—मुझे पृथ्वी वहुत प्यारी है। हर आदमी मेरे लिये जान देनेको तैयार है। देखते नहीं, मेरी पत्नी खाना पीना छोड़ बैठी है और मेरा मित्र सुधीर!—ओफ! उस बेचारेने चार दिनसे चैन नहीं ली। तुम चले जाओ मेरे सामनेसे—मैं तुम्हें नहीं देखना चाहता।"

लेकिन देवदूत बेरहम था। उसने सुनीलकी एक न सुनी। बेचारेका गला घोंट दिया। जान निकल गयी। देवदूतने सुनीलका हाथ अपने पत्थर जैसे हाथोमें धर दवाया और उसे ले उड़ा आसमानकी ओर। पृथ्वी मण्डल,

मे हाहाकार मच गया । सुनीलकी मृत्युपर हड्तालें मनायी गयीं, दुनियाका सारा कारोबार बन्द रहा । हर आदमी उसकी मृत्युसे अधीर हो उठा । ओह !—सुनीलके चले जानेसे दुनिया अन्धेरी हो गयी !

( २ )

मनुष्य मर जाता है लेकिन आत्मा नहीं मरती । आत्मा तो अमर है, फिर शोक कैसा ? लेकिन सुनील पृथ्वीके मोहमे जकड़ा था । देवदूत उसे खींचे लिये जा रहा था—एक भयानक सन्नाटेकी तरफ । वह छटपटाता, रोता, कराहता, और देवदूतसे प्रार्थना करता—"मुझे नहीं चाहिये स्वर्ग । मुझे पृथ्वी सबसे प्यारी है । हर आदमी मुझे वहा प्यार करते हैं । मेरी पत्नी मुझे न पाकर मर जायगी । मेरा मित्र मुझे न पाकर अन्धा हो जायगा ।"

देवदूत मुस्कुराता, मगर जवाव न देता । वह गूंगे बहरे की तरह उसे खींचे लिये जा रहा था—एक अजीव सनसनाते हुये सन्नाटेकी ओर । जहां साय-सायके सिवा दूसरी आवाज न थी । किसी वस्तुके दर्शन न थे—किसी रङ्ग रूपकी झलक न थी ।

सुनील चिल्ला उठा—"क्या यह भी कोई जगह है ? यहा न प्रेमके फुहारे है, न प्यारको फुलझड़िया । लौट चलो पृथ्वीकी तरफ । मैं अपना घेर चाहता हू, अपनी प्यारी पत्नी, अपना प्यारा दोस्त । कहा हैं मुझे प्यार करने वाले मनुष्योंके झुण्ड ?—कहा है मुझ पर प्रेम-प्रसून बरसाने वाले भक्तो की भीड ?"

देवदूत खिलखिलाकर हॅस पड़ा । वहं बडा बेरहम था । सिवा आगे

बढनेके पीछे लौटना जानता ही न था। वह बराबर आगे बढा जा रहा था —हहराती हुई आंधीकी तरह!

वह कितने दिन और कितने महीने चलता रहा,—इसका हिसाब लगाना टेढ़ा है। वह बराबर चला जा रहा था। दूर—बहुत दूर—पहुंचकर वह जरा झिझका और ठहर गया। सुनील आश्चर्यसे उसका मुंह ताकने लगा। देवदूतने कहा—"देखो, लगभग पांच सौ कदम चलनेके बाद हम एक तङ्ग रास्तेमें पहुंचेंगे। वहा अपनी आखें बन्दकर लेना और बाईं तरफ न देखना, नहीं तो पछताओगे।"

सुनीलने पूछा—"क्यों?—वहा है क्या?"

देवदूत बोला—"नर्क"

—और वह बिना सुनीलका इशारा पाये ही आगे बढने लगा। सुनील पृथ्वीकी तरफ लौट जानेके लिये उससे बराबर खुशामद करता रहा। लेकिन देवदूत था पत्थर दिल। उसने सुनीलकी एक न सुनी और बराबर आगे बढता गया। अब वह उस तङ्ग रास्तेमें पहुंच गया, जिसकी उसने चर्चा की थी।

०

किन्तु सुनील चालाक और पट्टीबाज था। पृथ्वीका आदमी था इसी लिये, उसने देवदूतके सामने फौरन आंखें बन्दकर लीं, लेकिन नर्क देखनेके लिये वह बेचैन हो उठा। उसने चुपके चुपके अधखुली आंखोंसे बाईं तरफ ताड़कर देखा—भयानक लाल लपटें उठ रही हैं, जिनमें सैकड़ों हजारों औरत, मर्द जलते हुए त्राहि-त्राहि कर रहे हैं। झुण्डके झुण्ड अजगर साप बिच्छू स्त्री पुरुषोंके बदनपर लिपटे हैं। गन्दगीके परनालेमें मनुष्य कीड़ोंकी

तरह रेंग रहे है। वहा न धूप है, न हवा। सुनीलकी आत्मा काप उठी। उसने दर्द भरी चीखके साथ कहा—"जल्द भागो यहा से। उफ! मेरा अस्तित्व मिट रहा है। पिशाच! भूत! प्रेत!—नर्क—नर्क—नर्क!!!"

देवदूत तेजीके साथ आगे बढा। सुनीलका कलेजा धड़क रहा था। उसने मारे भयके आँखें बन्दकर लीं। देवदूत उसे खींचे लिये जा रहा था—किसी आज्ञात दिशा की ओर। अब वह एक चिकनी जगहपर कर रुक गया और सुनीलसे बोला—"खोल अपनी आखें!"

सुनीलने आखे खोलकर देखा तो वह एक विचित्र प्रकाशके सामने खडा था। उस प्रकाशमे इतना आकर्षण और प्रभाव था—जिसे सुनीलने जीवनमें कभी न देखा था। यह प्रकाश "ओ३म" मय था—करोड़ों सूर्य चन्द्रमाओं की जगमगाहटसे बढ कर। आदरके साथ सुनीलका मस्तक उस महातेजस्वी प्रकाशके सामने झुक गया और उसे ऐसा जान पड़ा-मानो उसने आज ईश्वर के साक्षात दर्शन किये। प्रकाशसे आवाज आयी—"तुम क्या चाहते हो?—स्वर्ग या नर्क?"

सुनील थरथराती आवाजमे बोला—"मुझे अपनी पृथ्वी, प्यारी पत्नी और प्यारा मित्र चाहिये। मैं स्वर्ग नर्क दोनोंसे घृणा करता हू।"

प्रकाशसे मोहिनी आवाज गूज उठी—"देवदूत! इस आत्माकी आज्ञा का पालन करो।"

देवदूतने साष्टाग प्रणाम किया। सुनील बोला—"जिस पृथ्वीसे मुझे यहा घसीट लाये हो, मुझे उसी पृथ्वीमे छोड दो।"

देवदूतने सुनीलकी आज्ञाका पालन किया। वह ले चला उसे पृथ्वीकी ओर!—उस पृथ्वीकी ओर—जिस पृथ्वीमें हम, आप और लाखों, करोड़ों मनुष्य अपनी सुख दुःख भरी जिन्दगी जानवरोंकी तरह व्यतीत करते हैं।

( ३ )

सुनील आ रहा था पृथ्वीकी ओर—दौड़ता और भागता हुआ। उसके पैरोंमें तूफान जैसी तेजी आ गयी थी। वह आकाशसे बेतहाशा भागता हुआ पृथ्वीकी ओर उतर रहा था।

चींटियोंकी तरह रेंगते हुये उसने आदमियोंके झुण्ड रास्तेमें देखे। उसे ऐसा मालूम हो रहा था—जैसे दरख्त, नदी, पहाड़ और विशाल अट्टालिकाओंको जमीनपर नक्शेकी तरह किसी चित्रकारने खींच दिया है। वह मारे खुशीके फूल गया—"आह! मेरी प्यारी पृथ्वी! तू कितनी खूबसूरत, शांतिमयी और सुजला सुफला है। तेरे गौरवका मुकावला लाखों स्वर्गकी सुन्दरतायें नहीं कर सकतीं।"

वह क्षण भर के लिये रुक गया और त्रिशंकु की तरह अधरमें लटके हुये उसने पृथ्वीको नमस्कार किया। पृथ्वीने भी उसे जैसे स्पर्धासे आशिर्वाद दिया। मारे खुशी और उत्साहसे सुनीलकी रगरग फड़क उठी और वह वसन्त समीरकी तरह झूमता हुआ पृथ्वीकी छातीपर उतर पड़ा। ओह! कितना आनन्द था उसे—कितना मधुर था उसके लिये पृथ्वीका स्पर्श!

उसने खड़े होकर परिचित स्त्री पुरुषोंके चेहरे ताड़े। लड़के बच्चोंकी तरफ निगाहें फेंकी। सडकपर दौड़ने वाली गाड़ियोंको भी उसने देखा। दार्शनिक, कवियों, महात्माओं और गृहस्थोंके भी उसने दर्शन किये। लेकिन

यह क्या ?—आज कोई उससे बोलता क्यो नहीं ? प्रेमसे उसका कोई स्वागत क्यो नहीं करता ? सुनीलका दिमाग चक्कर खाने लगा। उसके ध्यानमे यह बात आयी कि मैं स्वर्गसे लौटा हुआ आदमी हू इसी लिये कोई मुझसे नही बोलता। किन्तु इन सही विचारोंसे वह जरा न घबड़ाया। उसने हिन्दू-फिलासफीको व्यर्थकी चीज समझा। ससारके समस्त धर्मों, मजहबो और आत्मा सम्बन्धी खयालोको उसने गोबर दिमागोंकी उपज समझी। अब वह दौड़ा अपने बङ्गलेकी तरफ—अपनी प्यारी पत्नीसे मिलनेके लिये—जो उसे प्राणोसे बढकर प्यार करती थी और उसके लिये मर जाना चाहती थी।

बङ्गलेके सामने पहुच कर वह इधर उधर चक्कर काटने लगा। उसने ताज्जुबसे देखा—बङ्गलेका दरवाजा अन्दरसे बन्द है और बाहर बैठा है—एक रोबीला गोरखा—जो बन्दूक लिये पहरा दे रहा है।

सुनील गुस्सेसे काप उठा। इसे बगैर मेरे हुक्मके पहरा देनेका क्या हक है ? वह सुर्ख आखोंसे दात पीसता हुआ आगे बढ कर चाहता था कि गोरखेको दो चार खरी खोटी सुनाकर अन्दर घुस जाय। पर बन्दूक से घबरा उठा। लेकिन परवाह क्या है ? आत्माके लिये ससारमे कोई बात असम्भव नहीं। वह इच्छा करते ही जो कुछ चाहे कर सकता है। सुनीलके लिये भी यही बात थी। गोरखेसे फिजूलकी टाय-टाय करना उचित न समझा। वह बङ्गलेकी दीवालपर रेंगता हुआ छतपर जा पहुचा और कूदकर आगनमे हो रहा। उसने उत्सुकता से घूर घूर कर अपने प्यारे बङ्गलेकी तरफ देखा। सब चीजे ज्यो की त्यो हैं। उसकी हर

चीजको छूने और प्यार करने की तबीयत हुई। किन्तु पहले पत्नीसे मिलना जरूरी था। आखोंकी सर्चलाइट फेंककर उसने ऊपरकी तरफ देखा। सोनेवाले कमरेमे हरी रोशनी जगमगा रही थी।

सुनील मारे आनन्दके खिल उठा। ओह !—वसन्तकी मतवाली रात-मस्तानी खुशबू और तर दिमाग़ !-वह सन्नाटेसे तितलीकी तरह उडकर अपने कमरेमे पहुचा। किन्तु यह क्या ?—

उसकी पत्नीका शृङ्गार आज अप्सराओंके भी रूपको मातकर रहा है। वह बडी आकर्षक मालूम होती है, प्यारी और रस रङ्गभरी !

उसके हाथमे शराबकी सुनहरी प्याली है। जो मस्तानी अदासे उसके प्रिय मित्र सुधीरके होठोंपर नाच रही है। सुधीरकी दोनो बाहें मोहिनीके गलेसे लिपटी हैं और दोनो एक होकर अधर-रस-पानमे मतवाले हैं।

सुनीलका सर घूम गया। उसकी आखोंमे जैसे इस दृश्यने हजारों त्रिशूल भोक दिये। पैर जमीनमे गड गये और बरफ जैसी शीतलता उसके पैरोंसे चढकर समूचे शरीरमे व्याप्त होने लगी। उसने देखा—पृथ्वी कोयले की तरह काली, गन्दी और नफरत भरी है—मनुष्योंके झुण्ड भूत पिशाचो से बढ कर !

मोहिनी बोली—"सुधीर ! मेरे पतिकी आत्मा स्वर्गसे यह मिलन देखकर क्या कहती होगी ?"

"कहती क्या होगी ?" सुधीरने कहा—"ईर्ष्याकी आगमे जलकर खाक हो रही होगी।"

मोहिनी—"यदि वह यहा आकर किसी तरहका उत्पातकर बैठे तो ?"

"पगली हो तुम!"—सुधीरने मोहिनीको अपनी गोदमे खींचते हुये कहा—"मरा हुआ आदमी लौटकर नहीं आता। मेरे कलेजेसे लिपट जाओ। सुनीलके हजार हाथ भी तुम्हे नही छीन सकते।"

मोहिनी सुधीरके गलेसे लिपट गयी।

उफ! कैसा भयानक दृश्य था। सुनीलकी छातीपर मानो हजारों हथौडे पत्थर तोडने लगे। अब उसमे जरा भी टलनेकी ताकत न थी। वह लड़खड़ाकर गिरा ही चाहता था कि किसीने पीछेसे पकड़ लिया और नम्रताके स्वरमे कहा—"शायद तुम थक गये हो। होशमे आओ और मेरी तरफ देखो।"

सुनीलने आखे खोलकर देखा—उसका पूर्व परिचित देवदूत उसके सामने खडा हैं। सुनीलने पूछा—"तुम यहा कैसे?"

देवदूतने कहा—मुझे ईश्वरका आदेश है, सब तरहकी विपत्तियोंसे तुम्हे बचाना। बताओ, तुम क्या चाहते हो? पृथ्वी, स्वर्ग या नर्क।"

"स्वर्ग मेरे जैसे पापी नहीं पहुचते।"—सुनील बोला—"जल्द ले चलो मुझे अपने नर्कमे। और मुझे आगकी भयानक लपटोंमे झोक दो। उन लपटोंमें जलकर मैं महान शीतलताका अनुभव करूगा। किन्तु मित्र! अब मैं पृथ्वीमे न रहूगा। पृथ्वी नर्कसे अधिक भयानक और घृणित हैं। इसकी तुलनामे नर्क लाख दर्जे अच्छा है!"

देवदूतके होठोंपर हँसी खेलने लगी। बोला—"पृथ्वीमे कोई अपना नहीं। यहा सब सुख देखे की प्रीति है। मरनेके बाद आत्मा जहा जाती है; वहा न तो स्वर्ग है, न नर्क। वहा सिर्फ आत्माका ही एक क्षत्र राज्य

है। स्वर्ग नर्ककी कल्पनाएँ पृथ्वीके मनुष्योंकी हैं। क्योंकि पृथ्वीमें ही नर्क है, पृथ्वीमें ही स्वर्ग। मेरे साथ, आत्माके आनन्द-राज्यमें विचरण करो।”

सुनील देवदूतके साथ आकाश मण्डलकी ओर चल पड़ा। उसकी यह यात्रा ऊंचे, बहुत ऊचे,-चढ जानेके लिये बेचैन हो उठी।

पृथ्वीमें उसकी प्रियतमा पत्नी उसके अन्तरङ्ग मित्र सुधीरके साथ वसन्त की सुहावनी रात व्यतीतकर रही थी। दोनों एक दूसरेके मोहमें मदाध थे। जैसे आज उन्हें स्वर्गका राज्य मिल गया हो और इस आनन्दके सामने उसके लिये दुनियाके सारे आनन्द-वैभव तुच्छ हो—पानीके बुलबुले की तरह!

---

# होस्टलके लफंगे

———*———

प्रोफेसर वागची उन आदमियों में थे, जो बोलते हैं कम किन्तु मौका पाते ही सर्पकी तरह डस लेते हैं। उनकी चढी हुई सुर्ख आखोसे कालेजके छात्र कापते थे। उनकी एक घुड़की, एक इशारेमे प्रलयकी आधी चलती थी। छात्रोंमे भीतर ही भीतर उनके खिलाफ विप्लव चला करता, किन्तु किसीकी सामने बोलनेकी हिम्मत न होती। लोग जहरका घूट पीकर मन ही मन कुढा करते थे।

मैं जिस होस्टलमे रहता हू, वहा प्रोफेसर वागचीके खिलाफ रोज कोई न कोई षडयन्त्र चला करता हैं। रात-रात भर विद्यार्थियोंमे कानाफूसी होती है, गुप्त सभायें की जाती हैं। पर सफलता किसीको नहीं मिलती। जहा सुबह सूर्यकी किरणें पृथ्वी मण्डल पर फैलीं—सबके विद्रोहका नशा हिरन हो गया। वही नहाने धोने और खाने पीनेकी हलचल, क्लासमें हाजिर होनेकी बौखलाहट और प्रोफेसर वागचोकी धमकिया सहनेकी आदत।

होस्टलमे यो तो सभी विद्यार्थी पाजी और चिलविले हैं। पर सबसे ज्यादा नाम वदनाम है मेरे त्रिगुट्टका। त्रिगुट्टमे हम तीन विद्यार्थी हैं—सुरेन, नारङ्गीलाल और मैं। प्रोफेसर वागची हम तीनोंको कहते हैं—होस्टलके लफगे। हम अपने इस उपनाम से न तो चिढते है, न नाराज होते है।

उल्टे यदि कोई हमे इस नामसे पुकारता है तो हम मजे ले-ले कर प्रोफेसर बागचीको धन्यवाद देते हैं।

सुरेन बङ्गालके नदिया जिलेका रहने वाला है। देखनेमे तो है हड्डियो-की ठठरी। पर दिमाग है विज्ञानकी प्रयोगशाला। इसे कविता लिखनेका बेहद शौक है। जहा जरा फुर्सत मिली कि आप बैठ गये हाथमे कागज पेंसिल लेकर और उडने लगा उनकी कल्पनाका हवाई जहाज। आज "प्रियाके प्रति" कविता लिखी जा रही है, तो कल "पर्वत शिखर" की सैर हो रही है।

दूसरे हैं इलाहाबादके नारङ्गीलाल। यह किसीसे न दबनेवाले तगडे जवान हैं। लापरवाहीसे इनकी गहरी दोस्ती है। हँसनेमें एक ही उस्ताद हैं। पढते तो हैं वकालत, पर सङ्गीतके कीडे हैं। राग रागनियोंकी लय इनसे पूछ लीजिये। ध्रुपद और दीपकराग क्या है, यह घण्टो इसकी व्याख्या करेंगे। क्लासमे भी कुछ न कुछ गुनगुनाते ही रहते है।

तीसरा मैं हू। कालेज, होस्टल, पडोसी यहा तक कि शहर भरके आदमी मुझसे घबराते और मुझे गुरुदेव कहते हैं। मैं हू भी पावरफुल आदमी। शायद मुझसे अधिक शक्तिशाली छात्र इस शहरमे दूसरा नहीं। जिसकी तरफ एक बार ताक दू, वह फौरन मेरे बसमे हो जाय। मेरी यह मोहिनी शक्ति इतनी मशहूर है कि लोग दूर दूरसे मेरे दर्शन करने आते है। मैं डाक्टरी पढता हू, और किसी भी मर्जका आपरेशन करनेसे मुझे बेहद दिलचस्पी है।

प्रोफेसर बागची हम तीनोसे जलते है। इसका कारण यह है, जब

प्रोफेसर साहब क्लासमें आते हैं, तब हम न तो उनकी इज्जत करते हैं, न सल्यूट या नमस्कार। चुपचाप अपनी चेयर पर जमे हुये फालतू किताब पढ़ा करते है। हमारे प्रति प्रोफेसर बागचीका गुस्सा उनके मनमें ही मॅड-लाया करता है। वह कभी प्रकट रूपसे न तो हम पर बिगडते है, न डाट-नेकी हिम्मत करते है। इसमे भी भेद है, और वह यह कि हम तीनो कालेजके सबसे तेज छात्र हें। हमारे दिमागके सामने कभी कभी प्रोफेसर साहबको भी नतमस्तक होना पडता है। वह अपनी चालाकीमे मस्त रहते हैं और हमे किसी गहरे षडयन्त्रमे फसाकर मारना चाहते है। पर हम भी है पूरे घाघ। उनका पासा कभी चित नही पडने देते और बराबर उनसे होशियार रहते हैं।

बकरीदकी छुट्टियोंमे दो तीन दिनकी देर थी। मैदानमे कुरबानीके लिये मोटे तगड़े बकरे बिक रहे थे। प्रोफेसर बागची मछलीसे ज्यादा बकरा खाना पसन्द करते हैं। उस दिन वह गये थे शामको मैदानकी हवा खाने। लौटते समय एक अच्छा तगडा बकरा खरीद लाये और उसे घरके आगनमें रस्सियोंसे बाघ दिया। उनका ध्यान था कल रविवारको छुट्टी है। काली माताके सामने बकरेका बलिदान कर स्वादिष्ट प्रसाद खाऊगा। रात-भर वह गहरी निद्रामे खुर्राटे लेते रहे। जब सवेरे उनकी आख खुली तो बकरेका खयाल आया। चटपट बिस्तरेसे उठे और आगनमें आये। नजर दौडाते ही सर घूम गया। आखे फाडफाड कर देखा—जमीनमे रस्सीका फदा पडा है और बलिदानका बकरा गायब है!

प्रोफेसर बागचीने घरका कोना कोना छान डाला, बिस्तर और कपडे

उलट पुलट कर देखे, टेविलोंके ड्रायरोंकी तलाशी ली—बकरा कहीं न मिला। वह हार कर खीझे, झल्लाये, और लम्बे कदम बढाते हुये थानेमे जा धमके। वहा हम तीनोका नाम लिखा दिया—कालेजके लफङ्गोंने वकरा चुराया है। जज साहबके इजलासमें मामला ठोंक दिया गया, हम तीनोंके नाम सर्च वारण्ट निकल गये !

जब यह खबर हमारे कानोंमें पडी तो सनसे जान निकल गयी। जैसे सरपर वज्रपात हुआ हो। हम तीनो चाहे कैसे ही बहादुर क्यों न हो, हमारी सबसे बडी कमजोरी यह है कि हम पुलिससे बहुत ज्यादा घबड़ाते हैं और उन स्थानोंमे भूलकर भी चक्कर नहीं काटते' जहा पुलिसका पहरा होता है। करते क्या ? घबराकर पुलिसके चगुलसे निकल भागनेकी स्कीम सोचने लगे। चाहे जैसे हो, पुलिसके हमलेसे बचना ही होगा !

( २ )

रातभर हम गुप्त परामर्श करते रहे। सुबह चार बजते बजते सब बातें तय हो गईं। होस्टलके बगलमें एक लोहारकी दूकान थी। उससे आरजू मिन्नत कर सड़ी टूटी चारपाई उधार ले आये। मेरे कमरेके सामने चारपाई विछा दी गई। सुरेन उसमे मुरदेकी तरह लेट गया। नारङ्गीलालने सर-से पैर तक उसे चादर उढा दी, मु ह ढक दिया। और खुले रख दिये सिर्फ थोड़े थोड़े कापते हाथ पैर।

नारङ्गीलाल यू० पी० के थे ! उनके देशकी स्त्रियोंमें पर्दा प्रथा खब प्रचलित है। वह कभी कभी हम लोगोमे इस प्रथाकी नकल भी किया करते थे। आज वह साध पूरी हुई। हमने उन्हे साड़ी पहना कर बना

दिया खासो देशवाली दुलहिन। वह लम्बा सा घूघट काढकर चारपाईके पास बैठ गये और सिसकिया ले ले कर रोने लगे। जैसे दुलहिनके पतिका देहान्त हो गया हो या दस पाच मिनटमे होने ही वाला हो!

मैंने अपना कोई मेकअप नही किया सिर्फ रोनी सूरत बनाकर गीता पढने लगा।

ठीक सात बजे होस्टलमें पुलिसका हमला हुआ। लगभग एक दर्जन लाल पगडी पुलिस और इन्सपेक्टर रमेशचन्द्र बन्दोपाध्याय!

सबके सब धड़धड़ाते हुये कमरेमे घुस आये। मैं गीता पढनेमें मशगूल था। नारङ्गीलाल रो रहे थे और सुरेनके हाथ पैरोंमें भयानक कॅपकॅपी चढी थी। किसीने पुलिसको तरफ आख उठा कर भी न देखा। रमेश बाबू सन्नाटेमे आ गये। धीरे-धीरे आगे बढकर सर्च वारण्ट मेरी तरफ बढाते हुये बोले—

"मैं आपके कमरेकी तलाशी लेना चाहता हू। आप लोगोने प्रोफेसर बागचीका बकरा चुराया है।"

"बकरा!"—मैं गीता फेंककर झड़ाकसे उठ खडा हुआ और बोला—"हम और चोर! कहते क्या हैं आप?"

इन्सपेक्टर रमेश बाबूने कहा—"मैं जो कहता हू, ठीक कहता हू! पुलिस कभी गलती नहीं करती।"

"झूठ!"—मैं गुस्सेमे तमतमा कर बोला—"बकरा चुरानेकी बात एकदम गलत है। आप आरामसे तलाशी लीजिये।"

नारङ्गीलालका रोना कुछ जोर पड़ गया और सुरेनके हाथ पैर ठीक उसी

तरह थरथराने लगे—जैसे मरते समय आदमी कापता है। इन्सपेक्टर रमेश बाबूने पूछा—"इस आदमीको क्या हो गया है?"

"हैजा!"—मैंने कहा।

"हैजा! माई गाड!!"—रमेश बाबू नाक मे रुमाल दबाकर चार-छ कदम पीछे हट गये। पुलिस वाले भी कुछ पीछे सरके। मैंने नारङ्गी-लालकी तरफ इशारा कर कहा—"यह इस नवजवानकी बीवी है। साल ही भर तो हुये हैं शादीको। बेचारी विधवा ‥ ?"

"राम! राम!!"—रमेश बाबू अफसोस करते हुये बोले—"रोने और गीता पढनेसे कोई फायदा न होगा। आपको डाक्टरके लिये दौड़ धूप करनी चाहिये। आफत है आफत!—क्या सचमुच आपने बकरी नहीं चुराया?"

"यह काम कसाइयोका है।"—मैंने कहा—"मैं विद्यार्थी हू। बकरा लेकर क्या करूगा? कालेजके सभी छात्र जानते है, मैं मांस मछली नही खाता।"

रमेश बाबू हैजेसे बहुत ज्यादा घबड़ा रहे थे। उन्हे डर था, हैजेके कीडे सास द्वारा कही उनके शरीरमे न घुस जाय। मेरी बात पर उन्हे विश्वास हो गया। नोटबुकमे जल्दी-जल्दी कुछ लिखने लगे!

दुलहिनको उबकाई आने लगी और वह 'ओ—ओ' कर कै करनेका अभिनय करने लगी।

मेरी भी कुछ ऐसी ही हालत हो रही थी—कै अब हुई! अब हुई!!!

इन्सपेक्टर रमेश बाबू बोले—"मैं अभी जज साहबसे इसकी रिपोर्ट करता हू। हैजेसे बचो, यह छूतकी बीमारी है। जहा मकानमें एक

आदमीको हैजा हुआ—समझना, वहा सबके सब साफ हैं।"

मैंने कहा—"तलाशी तो ले लीजिये।"

रमेश बाबू बोले—"कोई खास जरूरत नहीं है। और यह भी ठीक है, आप लोग बकरा लेकर क्या करेंगे?"

नाकमें रूमाल दाबे हुये रमेश बाबू पुलिसके साथ चले गये। हम तडाकसे उठ बैठे और कहकहे लगाने लगे। बकरा टेबलके नीचे कसकर बांध दिया गया था। उसने उछल कूदकर कम्मलका मध्यस्थल एकदम फाड डाला था। जिससे उसकी दो चमकती आखें हमें बेरहमीके साथ घूर रही थीं।

नारङ्गीलाल चिल्ला उठे—"देखो बकरा किस तरह घूर रहा है। अगर साला इसी तरह रमेश बाबूके सामने ताक्ता तो गजब हो जाता, और इस समय हम सीखचोंके अन्दर बन्द होते।"

हम हँसते हँसते लोट गये और अपनी सफलता पर एक दूसरेको बधाई देने लगे।

( ३ )

इन्सपेक्टर रमेश बाबूने जजको रिपोर्ट दी—"मैंने होस्टलके लफङ्गोंकी तलाशी ले ली है, सारा मकान छान डाला गया। बकरा मिलना तो दूरकी बात है, उसकी गन्ध तक का पता नहीं मिला।"

होस्टलमें बुरी तरहसे हैजा फैला है। यदि फौरन कोई बन्दोबस्त न किया जायगा तो विद्यार्थी बे मौत मरेंगे।"

यह हमारे लिये दूसरी मुसीबत थी।

मैंने कहा—"नारङ्गीलाल! इस वार हमें पहलेसे ज्यादा मुसीबतें भोगनी पड़ेंगी।"

इन्सपेक्टरकी रिपोर्ट गजब ढाये वगैर न रहेगी। हैजेका नाम सुनते ही कारपोरेशनके अधिकारी हमें परेशानकर डालेंगे। रोगीको अस्पताल ले जाने के लिये एम्बूलेंस आयगी। होस्टलके कमरे फिनाइलसे धोये पोछे जायेंगे। शायद हमारे कपड़े भी जला दिये जायें। आज ही कल में धावा होगा।"

"तब तो बडी मुसीबत है"—नारङ्गीलाल उदास स्वरमें बोले"—यदि कहीं हमारी बेईमानीका भण्डा फोड़ हो गया, तो हाथोंमे हथकड़िया पड़ जायगी।"

सुरेन—"और अगर कही मैं अस्पताल भेज दिया गया तो वहा मुझे जरूर हैजा हो जायगा।"

"इसमें क्या शक?"—मैंने कहा—"पुलिसको साफ धोखा देकर वच निकलना बच्चोंका खेल नहीं है। कमबख्त बकरेने हुलिया तङ्गकर दी।"

"इसमें बकरेका क्या कसूर?"—नारङ्गीलाल बोले—"अब जल्द कोई तरकीव निकालनी चाहिये। मेरी राय है, सुरेन जज साहवसे मिले और प्राइवेटमें उनके सामने सच बातें पेशकर दे। साचको कोई आच न होगी।"

"और बकरा?"—मैंने पूछा।

"उसके लिये भी सच बातें कह दें।"—नारङ्गीलाल बोले—"हम अवश्य बकरा चोर हैं। देखो न, कैसा मिमिया रहा है।"

दनसे हमारी आखे बकरेपर जा पड़ी। वह हमारे ओढनेका कम्बल अपने तेज सींगोसे फाड़कर टुकडे टुकडेकर चुका था और इस समय दिलचस्पी से मिमियाता हुआ हरी हरी घास चर रहा था।

हम तीनोंने बकरेके सम्बन्धमे कानाफूसीकी और दस मिनटमे सब मामला तय हो गया। पर कारपोरेशनके हमलेकी बात यादकर हमारे सर घूम गये। सुरेनने कहा—"जज साहबके सामने जानेकी मुझमे हिम्मत नहीं है। बातें करते समय जबान लड़खडायगी। कहीं ऐसा न हो जेलकी हवा खानी पड़े।"

योंही एक घण्टे तक वर्किङ्ग कमेटीमे चख-चख चलती रही। अन्तमे जज साहबसे मिलकर सब बाते तय करनेका भार मुझे सौंपा गया और यह भी आदेश दिया गया—चाहे जैसे हो, नचा या हँसा रिझाकर—जज साहब को मना लेना होगा। जिसमें मामला कोर्टमे न चलने पाये।"

मैंने सब बातें मजूरकर लीं। सोचा; यह मुसीबत भी झेलो। जो होगा देखा जायगा।

( ४ )

सबेरेकी चहल पहल थी। जज साहब चाय पीकर अखबार पढ रहे थे। मैं झिझकता हुआ उनके सामने हाजिर हुआ। जज साहब बोले—"क्या बात है?"

मैंने दबी जबानसे सारी दास्तान कह सुनायी और यह बता दिया कि दर असल हमलोगोंने ही बकरा चुराया है।

जज साहब हँस पडे। खासकर हैजेके अभिनयसे उन्होंने बड़ी दिल-चस्पी ली। बोले—"मैं जानता हूं, कालेजके लड़के बड़े नटखट होते हैं, मैंने भी स्टूडेण्ट लाइफमे काफी शैतानीकी है। खैर, मैं तुम लोगोंको क्षमा कर दूंगा। बकरा प्रोफेसर साहबको लौटा दो।"

मैंने कापते हुये कहा—"उसे हमने चोर बाजारमे एक रुपये तेरह आने मे बेंच डाला!"

"रकम क्या हुई ?"—जज साहबने पूछा ।

मैंने कहा—"चाय विस्कुटमें उड़ गयी !"

जज साहबका चेहरा लाल हो गया । वह थोड़ी देरतक मुझे घूरते रहे। फिर न मालूम क्यों मुस्कुराकर बोले—"नया बकरा खरीदकर देना होगा ।"

मैंने कोर्निशकर कहा—"यह हुजूरकी जबर्दस्ती है । विद्यार्थियोंके पास फीसके रुपये तो जुटते नहीं, बकरा कहासे खरीदेंगे ?"

जज साहब कुछ बिगड़कर बोले—"तब क्या होगा ?"

मैं—"सच बातोंके लिये मुझे इनाम मिलना चाहिये । सच्चा भेद खोलकर हमने आपकी और कारपोरेशनकी सारी मेहनत बचा दी । मामला चलता, जरा सो बातके लिये आप परेशान होते । इस महगीके जमानेमे कारपोरेशनकी तमाम फिनाइल खर्च होती और अधिकारियोंको तरह-तरहकी मुसीबतोंका सामना करना पड़ता !"

जज साहब बोले—"अगर तुम मुझे हैजेका अभिनय दिखानेका वायदा करो और वैसा ही तमाशा दिखलाओ, जैसा रमेश बाबू और पुलिसके सिपाहियोंको दिखलाया था, तो मैं मामला डिसमिसकर दूंगा ।"

अगले रविवारको अभिनय दिखलानेका वादाकर मैं होस्टल चला आया । नारङ्गीलाल और सुरेनने जब सब दास्तान सुनी तो खुशीसे उछल पडे और मेरे दिमागकी तारीफ करने लगे । मैंने कहा—"हमलोग नुमाइशमे रखने लायक आदमी हैं । सहजमें ही किसीसे हार जायें, यह असम्भव है ।"

रविवारको जज साहब अपने खास दोस्तोंके साथ हमारा अभिनय देखने बैठे । सुरेनने हैजेके रोगीका पार्ट अदा किया । नारङ्गीलालने नयी दुलहिन

का और मैंने गीता पढ़नेका। इन्सपेक्टर और पुलिसकी एक्टिंग कालेजके दिली दोस्तोंने अदाकर दिखाई।

जज साहब और उनके दोस्त हँसते-हँसते लोटन कबूतर बन गये। अभिनयकी सफलतापर हमें फूलोंके गुलदस्ते मिले, चांदी सोनेके तमगे, सूट बूट और पुस्तकें।

शामको जज साहबके बंगलेपर हमे शानदार दावत दी गयी जिसमें प्रोफेसर वागची भी शामिल थे। जिस समय हम स्वादिष्ट भोजनपर हाथ साफ कर रहे थे, प्रोफेसर साहब हमे सुर्ख आंखोंसे इस तेजीके साथ घूर रहे थे कि यदि ब्रिटिश गवर्नमेंटका राज्य न होता तो वह या तो हमे गोलीसे उड़ा देते या कच्चा ही चबा जाते। उनकी जोशिली सांसोंसे हमपर गालियोंका तूफान बरस रहा था। पर हमे इसकी कोई परवाह न थी। क्योंकि हम ठहरे कालेजके तेज छात्र !!!

---

# शहरका आकर्षण

—*—

मनुष्य जीवनकी महान ट्रेजेडी है—वासनाका बढता श्रोत। जब मनुष्य वासना-श्रोतमे बहने लगता है, उसमे एक ऐसी बेहोशी आजाती है, कि उसे अन्धकारकी काली लकीरें सूर्य किरणोंकी तरह चमकती दिखाई देती हैं। वह अत्यन्त प्यासा हो उठता है और विश्व—मरु भूमिमें गिरता पडता दौड़ता है—अपनी प्यास बुझानेके लिये। किन्तु वह जिसे जल समझता है, वह धूपमें चमकती बालूके सिवा और कुछ नहीं होता।

पल्टूके जीवनमें भी कुछ ऐसी ही विचित्रता थी। वह वासनाओंका प्यासा था। धोबी होते हुए भी उसके मनमें सन्तोष न था। वह अमीर बनना चाहता था। देहाती आबोहवासे उसे घृणा हो रही थी और वह शहरके कोलाहलमें जिन्दगीके दिन व्यतीत करना चाहता था। वह सोचता, शहरके आदमी कितने साफ-सुथरे और चालाक होते हैं। काश, मैं भी शहरका वाशिन्दा होता, कीमती कपडे पहनता, मोटर होती! चौमञ्जिला मकान और दस-पाच नौकर!

पल्टूको इस वासनामें टक्कर खाते बरसो बीत गये। उसने देवी-देवताओंकी मिन्नतें मानी—कब्रोंपर शिरनी चढायी। पर नतीजा कुछ न निकला। वह ज्यो का त्यो धोबी रहा। वही देहातियोंके भद्दे कपडे गधे-

पर लादकर तालावमे ले जाना, दिनभर कडी मेहनत कर उन्हे धोना और रातको मोटी पनेथिया खाकर सड़ी झोपड़ीमे पड रहना।

किन्तु मनुष्य जीवनका वैज्ञानिक महत्व यह है कि वह जिस इच्छाको गहराईके साथ सोचता है, वह एक दिन अवश्य पूरी होती है। पल्टूकी भी इच्छा पूरी हुई। उसने आयरिश लाटरीमे पचीस हजास रुपये पाये। सूखा दरख्त एकाएक वसन्तका वगीचा वन गया। पल्टूकी खुशीका ठिकाना न रहा। उते रुपये क्या मिले, मुट्ठीमे चाद आ गया जैसे यह फानूस-रूपी दुनिया खरीद ली हो उसने। वह चलता तो था जमीनपर—लेकिन उसके मिजाज आसमानपर उड़े फिरते थे।

उसने धोवी पेशा छोड़कर स्वय अपनी काया पलट तो कर ही ली, साथ ही उसने अपनी नौजवान वीवीका भी चोला वदल दिया। उसके लिये अच्छेसे अच्छे सोने-चादीके जेवर वनवाये गये। एक वेशकीमती हीरेका हार भी उसके गलेमे झूमने लगा। सेण्ट, पाउडर और सुगन्धित तेल भी खरीदे गये। अव उन्हे देहात कतई अच्छा न लगता। दोनो एक दिन वोरिया-विस्तर वाधकर चल पडे कलकत्ताकी सैर करने। उनका इरादा था, अव ठाट-वाटसे कलकत्तेमे रहेगे और वहा कोई आकर्षक रोजगार कर करोड़-पती वन जायगे!

[ २ ]

हवड़ा स्टेशनपर उतरते ही उनके होश उड गये। प्रचण्ड जनकोलाहल, मनुष्योंकी भयानक भीड! पल्टूको कई आदमियोने घेर लिया। एकने कहा, फिटन लाऊ सरकार! दूसरा सलाम कर वोला—घोड़ागाड़ी हाजिर है। तीसरे और चौथेने आवाज दी—टैक्सी। पाचवा वोला—रिक्शा!

पल्टूने झुंझलाकर कहा—“मुझे मोटर चाहिये।”

चार-पाच टैक्सीवाले एक साथ बोल उठे—“मोटर हाजिर है। कहां जाना होगा ?”

पल्टूने कहा—“भवानीपुर थानेके पास। लम्बर नौ। बिहारी बाबूका मकान।”

बिहारी पल्टूका रिश्तेदार था। खूबसूरत जवान। किसी थियेटर कम्पनी का ऐक्टर।

टैक्सीमे सामान लाद दिया गया। पल्टूने बैठकर सन्तोषकी सास ली। बगलमे बतसिया भी बैठी थी—सिकुडी और शरमाई हुई।

पल्टूने ड्राइवरसे कहा—“क्या भाड़ा लोगे ?”

ड्राइवरने मीटर दिखाकर कहा—“इसमे जो उठेगा दे देना।”

पल्टूने मीटर कभी नहीं देखी थी। वह गौरसे उसे ताड़ने लगा।

ड्राइवरने कहा—“घबड़ानेकी कोई बात नहीं। आप इतमीनान रखिये। इसमें ठीक-ठीक भाड़ा उठ आयेगा।”

पल्टूने कोई जवाब न दिया। टैक्सी हार्न बजाती आगे बढी। दोनों जिन्दगीमे पहली मर्तबा मोटरपर चढे थे। ज्यों-ज्यो मोटर दौडती, उन्हें ऐसा मालूम होता—अब ट्रामसे लडी, मोटरसे टकराई, रिक्शा चकनाचूर हुआ।

दोनोंके दिल जोर-जोरसे धडकने लगे। पल्टूने घबराकर कहा—“ओ भाई मोटरवाले! जरा धीरे-धीरे हाको। डर लगता है।”

ड्राइवरने कहा—“आप खामोश बैठे रहें। हम घास नहीं खोदते।”

दोनों चुप रह गये और आखें फाडफाडकर देखने लगे—अजूबा और निराला है कलकत्ता शहर! बड़े-बडे ऊचे मकान, साफ-सुथरी सडकें, औरत मर्दोंकी भीड, तरह तरहकी सवारियां,—और सबसे अधिक आश्चर्य तो उन्हें ट्राम और रिक्शा देखकर हुआ। रिक्शाको आदमी बैलकी तरह खींचता है। पर ट्राममें न तो बैल जुते हैं, न घोडे। उसने कौतूहलसे ट्रामकी तरफ इशारा कर ड्राइवरसे पूछा—"यह कौन सी सवारी है ?"

ड्राइवरने कहा—"ट्राम!"

पल्टू—"कैसे चलती है ?"

ड्राइवर—"बिजलीसे।"

फिर कोई कुछ न बोला। टैक्सी सनसनाती हुई चौरङ्गीकी सडक पर उडी जा रही थी। हवाके झोंकोंसे बतमियाकी साड़ी फर्र-फर्र उड़ रही थी। वह कभी मुस्कुरा कर पल्टूको देखती, कभी अपनेको। कभी ड्राइवर पर नजर दौडाती, कभी ऊची और साफ सुथरी कोठियों पर।

काफी देरमें टैक्सी भवानीपुर थानेके पास आकर खडी हुई। ड्राइवरने पूछा—"कहा उतरोगे ?"

पल्टू बोला—"बताया न। नौ लम्बर, बिहारी बाबूका मकान!"

और घण्टेभरकी छानबीनके बाद हाजरा रोडमे उन्हे नौ लम्बर मिला। इसीमें बिहारी बाबू रहते हैं। छोटा-सा मकान है। नीचे एक फलवाले मियाकी और एक बङ्गाली बिसातीकी दूकान है। मकानके दरवाजेपर ताला बन्द है। टैक्सी ड्राइवरने फलवालेसे पूछा—"क्या बिहारी बाबू इसी मकानमें रहते हैं ?"

"जी हां"—फलवाले मियाने कहा—"वह अभी रिहर्सलमें गये हैं। रातको नौ-दस बजे लौटेंगे। शायद रात न भी आयें। क्या काम है?"

"वाहरसे मेहमान आये हैं!"—ड्राइवरने कहा—"मैंने उन्हें रेलसे उतारा है। कहो तो सामान दूकानमें रख दूं।"

"सामान तो रख सकते हैं। मगर ठहरेंगे कहा?"—फलवालेने पूछा।

"यहा वैठे रहेंगे।"—फलवालेको फुटपाथ दिखाकर पल्टू बोला।

सामान लेकर वतसिया मकानके नीचे वैठी और पल्टूने सात रुपये वारह आने टैक्सीवालेको किरायेके चुकाये।

तीन चार घण्टे फुटपाथपर बीत गये। विहारी वाबूका पता नहीं। पल्टू उकताने लगा। वह मकानके अन्दर जानेके लिये उतना न सोच रहा था, जितना कि सात रुपये वारह आने टैक्सीका भाड़ा अदा करने पर अफसोस कर रहा था। वह सोचने लगा—शहर भी कैसो अजीव जगह है। न वैल, न घोड़ा। सवारिया कलसे चलती हैं। ससुर किराया बहुत है। देहातमे इतनी दूरका एक रुपया भी न लगता। पर पहुचते देरसे!

खैर, कोई फिक्र नही। रुपये और नोटोसे मेरी कमर मजबूत है। खूब मजे उडाऊगा। खूब सैर करूगा शहरकी।

और वह धीरेसे मुस्कुरा कर हसने लगा। उसकी हसीमे देहातके प्रति घृणा थी और शहरके प्रति विद्रोही आकर्षण!

( ३ )

बडी रात बीते विहारी वावू घर लौटे। पल्टूने देखा—वह साहवी लिवासमे चादनीकी तरह चमक रहे हैं। दोनो ने एक दूसरेको पहचाना।

विहारीको पल्टूके एकाएक आगमन पर बड़ा आश्चर्य हुआ। पल्टूने कहा—"अन्दर चलो। सब किस्सा बताऊगा।"

रातभर विहारी बाबू पल्टू और बतसियासे उनकी जीवन कहानी सुनते रहे। उन्हे बड़ी खुशी हुई। सचमुच आज धोबी समाजमे पल्टूसे ज्यादा कोई अमीर न था।

दूसरे दिन विहारी बाबूने दोनोंको कलकत्तेकी सैर कराई। बडा अच्छा लगा उन्हें कलकत्ता। पर बतसियाको कलकत्तेके आदमियोंका मिजाज कुछ जॅचा नहीं। उसने देखा—वह जिस रास्तेसे जाती है, उधर ही लोग तेजी-के साथ उसे घूरते हैं। उनकी आखोंमे एक मदांध नशा है। गोया हर आदमी बतसियाको पी जानेके लिये व्याकुल है। पर वह कुछ बोली नहीं। शर्मकी बात थी। उसने अपने स्वामीसे भी इस विषय मे कुछ न कहा। हां, वह मन ही मन जलने जरूर लगी। पर इस अन्तर्ज्वालाको किसीने न समझा।

और उन्हें कलकत्तेकी सैर करते दो हफ्तेसे ज्यादा गुजर गये।

( ४ )

विहारी बाबू आयेशा थियेटर कम्पनीके प्रधान अभिनेता थे। उनके अभिनयसे दर्शकोंमे हलचल मच जाती। हालमे तिल रखनेकी जगह न मिलती। खासकर "द्रौपदी चीर हरण" तमाशेमे विहारी बाबू श्रीकृष्णका पार्ट गजबका करते।

उस दिन शनिवार था। रातको साढे नौ बजेसे "द्रौपदी चीर हरण" खेल होगा। विहारी बाबू कृष्ण भगवानका पार्ट अदा करेंगे। हाल ठसा-

ठस भरा था। स्पेशल सीटपर पल्टू और बतसिया बडे इतमीनानसे बैठे थे। दोनोकी आखोमे बिजलीकी प्रसन्नता खेल रही थी। पल्टूकी पोशाक तो कुछ ठीक थी नही—जैसे काला साहब। किन्तु बतसिया नयी दुलहिन बनी थी। वह सैकडोमें एक हसीन तो थी ही। सोनेके जेवर उसके सौन्दर्यको सौगुने रूपसे चमका रहे थे। गलेमे हीरेका हार चमक रहा था, और बदन पर सुनहरे बेलबूटोंकी साडी!

तमाशा शुरू हुआ। अपनी जिन्दगीमे थियेटर न तो कभी पल्टूने देखा था, न बतसियाने। दोनो मुग्ध होकर तल्लीनतासे देखने लगे। जब-जब श्रीकृष्ण भगवानका पार्ट आता, बतसियाका दिल बासो उछलने लगता। उसे ऐसा जान पडता, मानो श्रद्धा और भक्तिसे उसका मस्तक भगवानके चरणोपर लोट जानेके लिये व्याकुल हो रहा है। वह भूल गयी थी, कि यह पार्ट स्वय बिहारी बाबू कर रहे हैं। उसे ऐसा लगता, मानो स्वय वृन्दावन बिहारी श्री कृष्णचन्द्र अपनी मधुर लीलाओसे मुझे रिझा रहे हैं। ओफ! खिचा जा रहा है उनकी तरफ मेरा मन। कौरवोकी सभामे द्रौपदीकी लाज जा रही है। दुशासनके हाथ उसे नग्न करनेके लिये बेचैन हो रहे हैं। उसने करुण स्वरमे गाया—"दुख हरो द्वारिकानाथ शरण मैं तेरी।

आह, कितना करुण गीत था। दर्शकोके दिल रोने लगे। बतसियाकी आखोसे आसुओका झरना बह चला। हे भगवन्! सिवा तुम्हारे अबलाकी लाज कौन बचा सकता है? दुशासनने द्रौपदीका वस्त्र हरण करना शुरु किया। बमके गोले जैसी आवाज हुई। पर्दा फट गया और भगवान् श्री कृष्ण सुदर्शनचक्र चलाते हुए सामने नजर आने लगे। उनका मुख तेजस्वी

आभासे चमक रहा था। दर्शकोंमें आनन्दकी लहर दौड गयी। तालियोंकी तडातड आवाजोंसे थियेटर हाल गूंजने लगा। पल्टू पत्थरकी मूर्ति जैसा बन गया और बतसिया मारे आनन्दके बेहोश-सी हो गयी।

रातको एक बजे तमाशा खत्म हुआ। बतसिया पल्टूके साथ घर आयी। बिहारी बाबू भी साथ थे। पल्टूने बिहारी बाबूकी तारीफोंके पुल बाध दिये। पर बतसियाको होश न था। वह वृन्दावन बिहारी श्रीकृष्ण भगवानकी अपूर्व लीलापर मुग्ध थी। उसकी आखोंके सामने कोई दृश्य न था। श्रीकृष्णकी सावली मूर्ति उसकी नेत्र पुतलियोंके चारो तरफ आनन्द नृत्य कर रही थी।

घर आकर उसने देखा—और तो सब ठीक है। पर गलेका कीमती हीरेका हार गायब है!

बतसियाकी आंखोंसे खेलका नशा उतर गया। जैसे किसीने उसका कलेजा खींच लिया हो। वह हारके लिये व्याकुल होकर चारो तरफ उसे ढूंढने लगी—किन्तु हारका पता न था।

पल्टूने गुस्सेमें आकर देहाती भाषामें बतसियाको सैकड़ो गालिया दीं। बिहारी बाबूने कहा—"बिगडनेसे कोई फायदा न होगा। तुम फौरन थियेटर में चले जाओ। मैं मैनेजरके नाम चिट्ठी लिख देता हू। हार जरूर तुम्हारे सोफेपर पडा होगा।"

पल्टूको विश्वास हो गया—हार जरूर मिल जायगा। उसने साथमें बिहारी बाबूको भी चलनेकी सिफारिश की। बिहारी बाबूने जवाब दिया—"मैं पार्ट करनेसे बहुत थक गया हू। तुम फौरन चले जाओ—हार मिल जायगा।"

उन्होंने मैनेजरके नाम चिट्ठी लिख दी—"हीरेका हार खो गया है। हालमें पता लगानेसे मिल जायगा। मेरा दोस्त आपके पास जा रहा है।"

पल्टूने टैक्सी की, और दौड़ा गया—आयेशा थियेटर हालमें।

बतसियाका सिर घूमने लगा। वह हारके लिये छाती पीटती, रोती और पगलीकी तरह उसे कमरेमें इधर-उधर ढूढती।

बिहारी बाबू मुस्कुराकर बोले—"तुम फिजूल परेशान हो रही हो। हार मिल जायगा। अगर न मिला तो मैं उससे अच्छा बनवा दूगा।"

रातके तीन वज गये। पल्टू अबतक नहीं लौटा। बिजलीके प्रकाश में बतसियाका उदास सौंदर्य सूर्यमुखीकी तरह खिल रहा था। और बिहारी ·· ··!

वह बदमाश अभिनेता उसके सतीत्व हरणकी फिराकमें था। उसने बतसिया को कविताके शब्दोमे समझाया। उसने बतसिया को फसानेके लिये आकर्पक नृत्य छन्दोंकी रचनाकी—और पांच बजते न बजते उसने जबरदस्ती बतसिया के यौवनपर डाका डाल दिया!

हीरे का हार उसके सामने पड़ा था! किन्तु ····

उस समय बतसिया का कलेजा धड़क रहा था। बिहारीके मुंहकी शराबकी दुर्गन्ध उसे बुरी तरहसे बेचैनकर रही थी। उसने आखें फाड़ फाड़कर देखा—कमरेमे लगे हुये श्रीकृष्ण भगवानके रङ्गीन चित्र जलती निगाहोसे बतसियाको देख देखकर अट्टहासकर रहे हैं। यह वही श्रीकृष्ण भगवानके चित्र थे—जिन्होने भरी सभामें द्रौपदीकी लाज बचाई थी।

कैसी विचित्र लीला है!!!

बिहारी बाबू सुबह दस बजे तक आरामसे सोते रहे और बतसिया एक कोनेमें पड़ी हुई अपने भाग्यपर रो रही थी।

पल्टू अबतक हीरेका हार लेकर नहीं लौटा!!!

# उपन्यास-लेखक

सागरकी उपन्यास कलामे एक ऐसी ज्योति और ज्वाला रहती कि हिन्दी ससार उसकी प्रतिभापर मुग्ध था। उसके उपन्यासोमे मानव-चरित्र-चित्रण इस खूबीसे अकित होते कि, पाठकोंके मनपर एक गहरी छाप लग जाती और वे सागरके भक्त बन जाते। यों तो उसने कई उपन्यास लिखे थे, किन्तु उसका सबसे ताजा उपन्यास "देश सेवक" कलाकी चोटीपर पहुच गया था। इस उपन्यासके निकलते ही साहित्यिक दुनियामे हलचल मच गयी। सामयिक पत्र-पत्रिकाओंने सागरकी प्रशसाओके पुल बाध दिये! एकने तो यहा तक लिखा, इस ढङ्गका क्रातिकारी उपन्यास आज तक न तो जर्मनमें प्रकाशित हुआ है, न रूसमे। उपन्यास क्या है, भारतवासियोंके आर्तनादका जीता जगता चित्र है। धन्य हैं सागर महोदय। उन्हे किसीने साहित्य रत्नकी उपाधि दी, किसीने साहित्य गौरव कहा, सैकड़ोंने बधाईकी चिट्टिया लिखीं, हजारोंने धन्यवाद दिये।

किन्तु क्या इन हवाई शब्दोंसे सागर सुखी था? हरगिज नहीं। उसकी जिन्दगीमे आर्थिक कठिनाइयोकी जो ज्वाला जल रही थी—उसकी लपटोमे सागर जल जल कर खाक हो रहा था। उसे लोग मनुष्यके रूपमें देखते थे सही, पर वह मनुष्य रूपी दरिद्र देव था। उसे शाम तक भर पेट भोजन न मिलता। जो कुछ कमाई होती, उसे सूदखोर महाजन या काबुली

ले जाते। कर्जके बोझसे वह इस कदर दब गया था कि उसकी हड्डियां पिस गई थीं। नसोंका खून काला पड गया था और आखें गड्ढेमे धॅस गयी थी—जिनसे विश्वको जला डालने वाली चिनगारिया उड़ रही थीं।

सागर अपनी झोपडीमे बैठा हुआ किसी नये उपन्यासकी कल्पनाकर रहा था। अचानक हीरालालने प्रवेशकर कहा—"तुम्हारे हैंडनोटका समय पूरा हो रहा है। तीन वर्ष पूरे होनेमे सात दिन और बाकी हैं। डेड सौ का हैंडनोट है, सवा दो सौ व्याजके। पूरे तीन सौ पचहत्तर रुपयेका हिसाव है। यदि तुम उन्हे दो चार दिनमे न अदा कर दोगे तो बुरी हालत होगी। उपन्यास फुपन्यास लिखना भूल जाओगे।"

"मुझे व्यर्थ तङ्ग करते हो"—सागरने करुण शब्दोंमें कहा—

"जो महाशय मेरी पुस्तके छापते हैं, उन्होंने अगले सप्ताह कुछ देनेको कहा है। हाथमे आते ही आपके हवाले करूंगा।"

हीरालाल—"जैसे तुम हो, वैसे तुम्हारे प्रकाशक। दोनो झूठे और बेईमान! वर्षोंसे ऐसे ही झासे दे रहे हो, अवतक एक पाई न अदा की गयी। अखवार तुम्हारी बडी डीगे मारते हैं, उनसे कुछ क्यो नही माग लेते?"

सागर—"पत्र पत्रिकाओकी हालत शोचनीय है। लिखाईके वदले कोई एक पैसा नही देना चाहता। कुछ लोग लिख कर नट भी जाते हैं।"

हीरालाल—"उपन्यास कैसे विकते हैं?"

सागर—"बहुत कम। प्रकाशकके पास जब जाता हू, रोते ही रहते हैं—बाजार मन्दा है, कई दिनोंसे वोहनी तक नही हुई।"

हीरालाल—"तब मेरे रुपये कैसे अदा होंगे ? अमीरोंसे कुछ क्यों नहीं ऐंठ लाते ।"

सागर—"भीख मागना मेरी शानके खिलाफ है । और फिर आजकल के अमीर !—उनका अधिकाश धन ऐयाशीमें खर्च होता है । वे साहित्य-सेवियोंको कुत्ता समझते है ।"

हीरालाल—"तो इसके यह मायने हुये, कि मेरे रुपये अदा न होंगे और हैंडनोटकी मियाद पूरी हो जायगी ।"

सागर—"नहीं ऐसी बात नहीं है ।"

हीरालाल—"यदि तुमने हफ्ते भरके अन्दर रुपये न अदा किये तो मैं तुम्हारी हड्डियोंसे निकालूंगा ।"

हीरालाल गुस्सेसे गालिया बकता हुआ चला गया । सागरकी आखें आसुओंसे तर हो गई । कलेजा काप उठा, मैं उपन्यास लेखक हू, मेरा बड़ा नाम है । पर किस कामका ? व्यर्थ है मेरा जीवन, व्यर्थ है मेरी साहित्य साधना । इससे तो कुली मजदूर होना लाख दर्जा अच्छा था । पर उस दगाबाज ईश्वरको क्या कहू, जिसने मुझे लेखक बनाया ।

वह इसी उधेड़ बुनमें बैठा था, कि कई तगादगीरोंने एक साथ ही उसके घरमें धावा बोल दिया । इनमें एक लकड़हारा था, दूसरा धोबी, तीसरा हजाम और चौथा पसारी ।

सागरने सबके हाथ जोड़े और समझाया—"हफ्ते भरमें सबके पैसे चुका दूगा । मारकर भागूगा नहीं, इसी झोपड़ीमें मरूंगा ।"

चारोंने कहा—"जब तक हमारे पिछले पैसे न अदा होंगे हम न तो तुम्हारे कपड़े धोयेंगे, न दाढी बनायेंगे, आटा-दाल, नोन-तेल भी बन्द !"

हीरालालकी तरह वे भी भुनभुनाते चले गये। सागरने झुंझलाकर झोपड़ीका दरवाजा बन्द कर दिया और फटी चादर ओढकर सो रहा।

उसने स्वप्नमें देखा—कर्जदार उसे मार डालनेके लिये दांत पीस रहे हैं। किसीने उसे डण्डा मारा, किसीने पत्थर !—और उफ !—हीरालालने तो छुरी भोंक दी !!!

( २ )

चार दिन कटे, चार रातें ! सागरके मुंहमें दाना तक नहीं गया। भूखसे आखें तिल-मिला रही हैं। शरीर सूना हो रहा है। आंखोंके आगे अन्धेरा। वह पागलोंकी तरह रोता और धीरे-धीरे मुस्करा देता है।

वह अपनी झोपडीमें बैठा हुआ दुनियाको देख रहा था कैसा स्वार्थी है ससार !—कोई दुःख दर्दका साथी नहीं, किसीको मेरे जीवनकी परवाह नहीं। मैं चार दिनोंकी भूखसे छटपटा रहा हू, कोई दरवाजा तक झांकने नहीं आता। हे मा ! तू अपराधिनी है। तूने अपने पेटसे दरिद्र कलाकार-को क्यों जन्म दिया ? कर्जदार साप बिच्छूकी तरह मुझे निगल जानेके लिये तैयार हैं। हे प्रभु ! मैं क्या करूं ?

लेकिन कलाकारोंकी अवस्था पर प्रभु भी हँसते हैं। और न मालूम क्यों ?—उनकी इच्छा पूरी नही होने देते !

सुबहसे दोपहर हुई, दोपहरसे शाम ! सागर उसी तरह पत्थरकी मूर्ति जैसा बैठा हुआ अपने दुर्दिन पर आसू बहा रहा था। एका-एक एक चम-

कती मोटर उसके दरवाजे पर आकर रुकी। उससे तीन आदमी उतरे और सागरकी झोपड़ीमे घुस आये। सागरने देखा—उनमें एक हैं, "पल्लव" सम्पादक श्रीकृष्ण मेहरोत्रा। दूसरे हैं उसकी पुस्तकोंके प्रकाशक—बालकृष्ण अग्रवाल। तीसरे हैं दुबले-पतले कवि श्री बारहसिघा-जी।

सागरने उनका स्वागत किया। उसकी उदासी और बेचैनी प्रसन्नतामे बदल गयी।

तीनों उसी झोपडीमे एक फटी चटाई पर बैठ गये।

"पल्लव"—सम्पादक श्रीकृष्ण मेहरोत्रा बोले—"सागरजी! आपके नवीन उपन्यास 'देशसेवक' ने मनुष्योंकी काया पलट दी। वर्तमान साहित्य-मे आप जैसा सफल उपन्यास लेखक ससारकी किसी भी भाषामे नहीं है। हम आपके अभिनन्दनकी तैयारिया कर रहे हैं।"

सागरने कहा—"मैं नहीं चाहता आप मेरा अभिनन्दन करे। इससे फायदा ही क्या है?"

पल्लव—सम्पादक—"आपका उत्साह बढ़ेगा। साहित्यको शोभा होगी। देश विदेशोंमे आपका नाम चमकेगा।"

सागर—"मुझे न तो नामकी जरूरत है, न उत्साह और शोभाकी। मैं आपकी योजनामे शामिल न हो सकूंगा।"

"तब दुनिया आपको समझेगी कैसे?"—सम्पादकजीने कहा—"लोग आपको घमण्डी कहेंगे। आपको चाहिये हर सोसायटीमे शामिल हो। और अभिनन्दन! अजी, वह बहुत बडी चीज है। विरले ही साहित्य सेवीको यह सौभाग्य प्राप्त होता है।"

"इस आयोजनकी विराट तैयारियां की जा रही हैं।"—पुस्तक प्रकाशक बालकृष्ण अग्रवाल बोले—"आपकी जितनी ही पब्लीसिटी होगी, उतने ही ज्यादा उपन्यास खपेंगे। समझसे काम लीजिये, फायदा ही फायदा है।"

कवि बारहसिंघा जी उछले और बोले—"इस उत्सवमें राजे महराजे शामिल होंगे। बाहरके कवि भी बुलाये गये हैं। आपके सम्मानमे विराट कवि सम्मेलन होगा। आशा है, आप हमारी आशाओंपर तुहिन-विन्दु न बरसायेंगे।"

सागरका हृदय बदल गया। एक दैवी प्रसन्नतासे उसका चेहरा खिल उठा। कहा—"मैं मंजूर करता हू। किस दिन अभिनन्दन होगा ?"

पल्लव-सम्पादक खुश होकर बोले—"परसों टाउन हालमे, सजावटका भार कुशल कारीगरोंको दे दिया गया है। लगभग दस हजार रुपये खर्च होंगे। स्वीकृतिके लिये अनेक धन्यवाद।"

तीनो साहित्य-प्रेमी मोटर पर चढे और तितलीकी तरह उड़ गये।

सागर भूल गया अपना दुख दर्द, भूल गया कर्जदारोंको धमकिया, भूल गया ससारका स्वार्थी रूप।

उसके जीवनमे एक अनोखा तेज भर गया। भूख प्यास काफूर हो गई। अभिनन्दनके उत्तरमे मुझे क्या कहना होगा, वह काली पेन्सिलसे मटमैले कागज पर नोट करने लगा।

( ३ )

तीसरे दिन टाउन हालमे अभिनन्दन था। हाल आकर्षक ढङ्गसे सजाया गया था। राजा रईसोंके अलावा बड़ेसे बडे साहित्यिकोंके दर्शन हो रहे थे।

कवियोंका जमाव देखने लायक था। अजीब-अजीब शक्लें दिखाई देती थीं। सभी अपनेको सर्वश्रेष्ठ और महाकवि समझते थे। स्त्रिया भी काफी तादादमे थीं और पुरुषोंका झुण्ड तो टीड्डी दलकी तरह उमड़ रहा था। आज सभी उपन्यास-लेखकके दर्शन करनेको उत्सुक थे। जिसे देखिये, वही साग-रके उपन्यासोंकी चर्चा कर रहा है। दो तीन समालोचकोंमे तो आपसमें हाथा पाई तककी नौबत पहुच गयी। पर स्वयसेवकोंका प्रबन्ध अच्छा था, इस लिये कोई विशेष घटना नहीं घटी।

मगल गायनके पश्चात सभाकी कार्यवाही—आरम्भ हुई। पल्लव-सम्पादक श्रीकृष्ण मेहरोत्राने कवित्वपूर्ण शब्दोंमे सागरका गुणगान किया। उन्होंने कहा—"मुझे यह देख कर प्रसन्नता होती है, कि हमारे उपन्यास लेखकके सम्मानके लिये आज सारा शहर उमड़ पडा है। आजकी सभाको देखते हुये यह सहज ही मे अनुमान लगाया जा सकता है, कि हमारे देशमे जागरणका नवीन युग आ गया है और जनता अपने लेखकोंका सम्मान करना सीख गयी है।"

तालियोंकी गड़गड़ाहट हुई। फिर एक नवयुवतीने भाषण दिया। इनका भाषण इतना ओजस्वी था कि लोगोंमे सनसनी फैल गयी। खुद सागर महाशयको बड़ा आश्चर्य हुआ और वह मन ही मन उस नवयुवतीको बधाइयां देने लगे।

अब उपन्यास प्रकाशक बालकृष्ण अग्रवालकी बारी आयी। उन्होंने फड़कते स्वरमें कहा—"सागरके उपन्यास प्रकाशित होते ही लोग मधुम-क्खियोंकी तरह टूट पड़ते हैं और दूकानदारोंको दम मारनेकी फुर्सत नहीं

मिलती। आप देखेंगे सागरजीके उपन्यासोंको वह महत्व मिलेगा, जो तुलसीदासजीकी रामायणको नही मिला। इनके उपन्यास प्रत्येक घरकी लायब्रेरीमे सजे होंगे ? ट्रामों बसों और रेलके डिब्बोंमें आपको जो पुस्तकें दिखाई देगीं, वह सिर्फ सागरजीकी। सागरजी देशके रत्न हैं, साहित्यके सपूत हैं, हमारे दिलकी अगूठीके नगीना हैं। उनके उपन्यास पढिये और जीवनका आनन्द लूटिये।"

आपका भाषण समाप्त होते ही लगभग एक दर्जन वक्ताओंने सागरजीके उपन्यासोकी आलोचनाकी और उन्हे विश्वऔपन्यासिक सम्राट वतलाया। फिर हजारोंकी भीडमे सागरजीका अभिनन्दन किया गया। अभिनन्दन हाथके कते खद्दरपर खूवसूरतीसे छपा था। तत्पश्चात वह फूलोंके गजरोंसे लाद दिये गये और उनकी जयजय कार ध्वनिसे आकाश हिलने लगा। सागरजी अभिनन्दनके उत्तर मे कृतज्ञता प्रकाश कर साहित्यिक प्रगतिपर आध घण्टे तक भाषण देते रहे। इसके वाद कवियोंका नम्वर शुरू हुआ। सागर जी की तारीफमे मलङ्गजी, त्रिभङ्गजी, वकुलेशजी और परमेशजीने इतनीं भावपूर्ण कवितायें पढी कि जनता झूमने लगी। खासकर वारहसिंघाजी की कविताओंको लोगोंने वहुत पसन्द किया। कवियोंकी रस वर्षाके पश्चात उपन्यास प्रकाशक वालकृष्ण अग्रवाल पुनः उठे और जनताको सम्बोधितकर बोले—"आज जहा सागरजीकी प्रशसामे देश के वडे बडे विद्वानोंने कीमती स्पीचें दी हैं, वहा एक गधा भी रेंका है। यह है "उल्का" नामक चिथडा मासिक पत्र। इसने सागरजीके देश सेवक को रद्दी उपन्यास वताया है और मुझे इतनी वाहियात रचना प्रकाशित करनेके लिये गालिया दी हैं।

यह साहित्यका अपमान है, नेशनका इनसल्ट है, आप इस गन्दे अखवारका फौरन बायकाट करें और जहा भी इसकी प्रतिया मिलें, जला दें।"

जनता उत्तेजित हो गयी। लोगोंसे नोच-खसोटकर "उल्का" की दस-बीस प्रतिया इकट्ठीकी गई और उन्हें मैदानमे किरासन तेल डालकर फूंक दिया गया। सभा भी भङ्ग हो गई। अन्तमे उपस्थित लोगोंको जलपान कराया गया। जिसमे हजारों आदमियोंने भाग लिया।, लोगोंने मेवा मिष्ठान्नसे ठूस-ठूसकर अपने पेट भरे। दस हजार रुपयेसे अधिक आजके उत्सवमे खर्च किये गये और लगभग दो बजे रातको जलसा खत्म हुआ।

सागरजी फूलोंके हारोंसे लदे हुये मोटरमें बैठाये गये। वन्देमातरम् और सागरजीकी जयध्वनिसे आकाश पाताल हिल उठा। बड़ो मुश्किलसे मोटर स्टार्ट हुई। भीड़ कुछ दुर मोटरके पीछे दौड़ो—फिर सब समाप्त!

रातका सन्नाटा!—मोटर तेजीसे उड़ी जा रही थी। सागरका हृदय जहरीली ज्वालासे जलने लगा—कितना विराट जलसा किया गया था मेरे लिये। आज मैंने जाना—जनता मुझे कितना चाहती है, कितना प्यार करती है। किन्तु इससे मुझे मिला क्या?

जलसेमे दस हजारसे ऊपर खर्चकर डाले गये। पर मेरी जेबमे दस पैसे भी नहीं आये। अफसोस! सिर्फ कोरा सम्मान, तारीफोंके हवाई शब्द, खद्दरका अभिनन्दन, और कुछ फूलोंके हार! यदि दस हजारका दसमाश भी आज मुझे मिल जाता तो मेरी कला फूलती और कलाकारकी सारी तकलीफें दूर हो जातीं। पर मेरो तरफ कौन देखता है? भगवान! तू अन्धे धनिकोंको बुद्धि क्यों नही देता?

मोटर सागरकी झोपडीके दरवाजेपर आकर खडी हो गयी। ड्राइवरने दरवाजा खोला। सागर महोदय टूटे दिलसे उतरे। इतना बडा सम्मान पाकर भी इस समय उनका हृदय रो रहा था। मोटर वापस चली गयी और सागरजी झोपडीके अन्दर घुसे!

उन्होंने जैसे ही दियासलाई जलाकर मिट्टीके तेलका भद्दा दीपक जलाया, एक मजबूत हाथने उनकी कलाई पकड़ ली। सागरने घूरकर देखा—यम-राजके रूपमे हीरालाल खड़ा है, उसके साथ पाच-सात लठैत और हैं। सभीकी आखोंसे आग बरस रही है और प्रत्येक व्यक्ति उसे खा जानेके लिये फुफकार रहा है।

हीरालालने कहा—"नवाबीमे आज तुमने वाजिद अली शाह को भी मात कर दिया। पाकेटमे क्या है?"

सागरने कापते स्वरमे कहा—"खद्दरका टुकडा!"

हीरालाल—"और रुपये?"

सागर—"एक छदाम नहीं मिला। जिन्दगीमे मिलेंगे भी नहीं!"

हीरालालने तडा-तड चार तमाचे सागरके गालो पर जड दिये। एकने लात मारी, दूसरेने घूसा, और तीसरे ने उनके सरपर इतनी जोरसे लट्ठ मारा कि सागर महोदय चीखकर जमीनमे गिर पडे। खोपडी चूर-चूर हो गयी और झोपड़ीकी गीली जमीन खूनसे लहरा उठी।

हीरालालने साथियोंसे कहा—"अब चल दो यहा से। जैसे मेरे रुपये मरे, वैसे ही यह भी मर गया। बेईमान!"

और खूनियोंका वह दल अमावस्याके अन्धकारमे प्रेत की तरह अदृश्य हो गया !

दूसरे दिन शहरमे हाहाकार मच गया—प्रसिद्ध उपन्यास लेखक सागरजी मार डाले गये। अखबारोंके विशेषाक निकले। सम्पादकोंने उनकी मृत्युपर बड़े-बड़े आसू बहाये। पर उनकी मृत्युका रहस्य कोई नहीं जान सका। हत्या किसने और क्यों की ?

पुलिसके जासूस आज भी खूनीकी तलाशमे सर खपा रहे है पर कोई भी उसका अन्वेषण नहीं कर पाता। वह कौन था ? और किस लालचसे उसने उपन्यास लेखकका खून किया !

———

# जेल और मुक्ति

——✻✻——

फाटकेवाजीमें मैं परले सिरेका उस्ताद हू। वीस वर्ष गुजर गये, मैं जुये का यह नाटक वड़ी सफलताके साथ खेलता आ रहा हू। हारनेका नाम नहीं; वरावर जीतता हू। मेरे पास गिन्निया हैं, रुपये हैं और ढेरकी ढेर नोटे। मेरे पास इतना ज्यादा माल है कि शहरके वडे वडे रईस भी मेरा मुकावला नहीं कर सकते।

लेकिन दुनियामें मैं अकेला हू, औरतोंसे मुझे नफरत है, इसलिये मैंने अवतक शादी नहीं की। धर्म पर मुझे कतई विश्वास नहीं, इसलिये कभी फूटी कौड़ी नहीं दान करता। कोई कहता है, अनाथालय वनवा दो, मैं टाल देता हू। अपने झकझकाते राज प्रासादमे अकेला ही रहता हू। अकेला सोता हूं, अकेला जागता हू।

दुनियामें मेरे दोस्तोकी तादाद वहुत ज्यादा है। धनी आदमी हू इसी-लिये। मुझसे रकम ऐठनेकी झोंकमे सव मेरी खुशामद करते हैं। मैं भी परले सिरेका चाई हू। झासे पट्टीसे काम लेता हू और किसीको कानी कौड़ी नहीं देता। लेकिन क्या मजाल, कोई मेरे चगुलसे निकल जाय। इसके लिये सवसे वढिया वन्दोवस्त मैंने यह कर रक्खा है कि हर रविवारको मेरे यहा मित्रोंकी मजलिस जमती है। मैं शानदार पार्टी देता हू। दोस्तों-

को अच्छी तरह खिलाता पिलाता हू, मेरी जिन्दगीका यह एक सुन्दर नशा है।

उस दिन रविवार था। जोरोकी वारिश हो रही थी। आन्धी तूफानकी भड़सड़ाहट प्रलयका सामान उपस्थित किये थी। मेरे घरमे दोस्तोंकी पार्टी जमी थी। हा, वरसातकी वजहसे भोड़ भड़क्का कम था। पार्टी समाप्त होनेके बाद सब लोग चल दिये, वहा रह गया सिर्फ मैं। युगान्तरके सम्पादक लल्ली चाचा और एक फटूसा डाक्टर। जिसे हम डाक्टर 'पी' के नामसे पुकारते थे। पी सज्जन आदमी था। दुवला पतला वदन, फर्राटेको अग्रेजी बोलता। लेकिन नसीवका चक्कर, डाक्टरी जरा न चलती थी। डिस्पेंशरीमें दिन भर बैठे मक्खिया मारते। पचास साठ रुपये पैदा कर पाते थे। मैंने कहा—"मिस्टर पी अगर चाहें, तो आपकी तकदीरका सितारा बहुत जल्द चमक सकता है।"

मिस्टर पी ने तपाकसे पूछा—"वह कैसे ?"—मैंने कहा—"यदि आप फासीकी सजा उठा देनेका आन्दोलन करें तो वाजारमे आपका नाम चमक जाये और घर घर आपका गुणगान होने लगे। युगान्तर सम्पादक अपने आदमी हैं। यह आपके पक्षका समर्थन करेंगे। अखवारमे आपके फोटो भी छापेंगे। इस जोशोली विज्ञापनवाजोसे आप खूब प्रसिद्ध हो जायगे और आपका भाग्य पारस बन जायगा।"

मिस्टर पी ने मुस्कुराते होठोंसे कहा—"बड़ी सुन्दर राय है। यदि लल्ली चाचा इसे मजूर करें तो काम बन जाय।"

लल्लो चाचा बोले—"इसे मजूर करेगा मेरा ठेंगा। फासीकी सजासे मैं आजीवन कारावासकी सजा उठा देनेके पक्षमे हू।"

"यह क्यों ?—" मैंने उत्सुकताके साथ पूछा।

लल्ली चाचाने कहा—"फासीमें खटसे जान निकल जाती है। लेकिन आजीवन कैदकी सजा पाया आदमी भयानक कष्ट भोगता है। वह मौतके लिये चिल्लाता है, लेकिन मौत उससे दूर भागती है और यमराज भी उसकी हसी उडाते हैं।"

"मैं यह बात नहीं मानता।"—डाक्टर पी ने टेबुल पर घूसा पटक कर कहा—"आजीवन कारावासमें जीव हत्या नहीं होती। लेकिन फासी,—इसान-के लिये यह सबसे भयानक सजा है। लल्ली ,चाचा चाहे फासी प्रथा उठा देनेका समर्थन न करें। किन्तु मुझे विश्वास है, आप जरूर इस खूनी प्रथासे घृणा करते होंगे।"

मैंने गर्दन हिलाकर कहा—"जरूर!"

सम्पादक महोदयका रङ्ग उखड रहा था। झेंपते हुये डाक्टर पी से बोले—"क्या आप आजीवन कारावास पसन्द करते हैं।"

डाक्टर पी ने उत्तर दिया—"जी हा। यह बात मैं लाखोंमें चिल्लाकर कह सकता हू। यदि कोई मुझे एक लाख रुपये दे तो मैं खुद आजीवन कारावासकी सजा काट कर दिखा दूं—फासीसे यह दण्ड लाख दर्जे अच्छा है।"

सम्पादक महोदय बोले—"आजीवन कारावास क्यों ? मैं कहता हू, आपमें दस वर्षकी भी जेलयातना भोगनेकी ताकत नहीं है। आप चद दिनोंमें ही जेल जीवनसे तङ्ग आजायेंगे और जेलसे निकल भागनेकी कोशिश करेंगे।"

डाक्टर पी अपनी बातका समर्थन करते हुए बोले—"यह गलत खयाल है। यदि कोई मुझे एक लाख रुपये देनेका वादा करे तो मैं दिखा दूं, फांसीके मुकाबलेमें दस वर्षकी सजा कुछ नहीं है! उसे मनुष्य बडी मस्तीसे काट सकता है।"

लाख रुपयेका नाम सुनकर सम्पादक महोदय ठण्डे हो गये। लेकिन मेरे दिलमें जोशका तूफान बह गया। मैंने कहा—"अगर डाक्टर पी दस वर्षकी जेल भोगना स्वीकार करें तो एक लाख क्या, मैं उन्हें दो लाख रुपये दे सकता हूं।"

डाक्टर पी उत्तेजित होकर बोले—"मुझे आपकी बात मंजूर है। दस वर्षकी सजा भुगतनेके बाद मैं आपसे दो लाख गिनवा लूंगा। आज ही बल्कि अभी इसका एग्रीमेंट हो जाना चाहिए।"

उस समय पानी बरस कर निकल गया था। आकाशमें इन्द्र धनुषका रङ्गीन दृश्य बडा प्यारा मालूम हो रहा था। हम तीनों फौरन गाडी पर सवार होकर एटर्नी फरजन्द अलीके घर जा पहुंचे।

(२)

फरांटेसे एग्रीमेंट लिख कर तैयार किया गया, डाक्टर पी के साथ मेरी निम्न लिखित बातें तय हुई—

मेरे गुलजार बागके बंगलेमें डाक्टर पी कल आठ बजे सवेरे गिरफ्तार कर लिए जायंगे। कलकी तारीखसे दस वर्षकी तारीखके एक दिन आगे वे सुबह होनेके दो घण्टे पहले छोड दिये जायेंगे।

बंगलेकी बैठक घरमें चारों तरफ लोहेके मजबूत सींखचे लगाये जायेंगे।

कैदीको किसीसे मिलनेका अधिकार न होगा। वह किसीसे बातचीत भी न कर सकेगा। किसीको खत लिखनेकी भी उसे मुमानियत होगी। पढनेके लिये एक भी दैनिक अखबार न दिया जायगा।

नशेकी चीजें छोड़ कर भोजनकी सुन्दर व्यवस्था की जायगी और उसको इच्छानुसार खानेकी चीजें दी जायगीं।

वह जो पुस्तकें मागेगा, उसे पढनेके लिये दी जायगी। भोजन और पुस्तकोंके चुनावमें उसे अपनी माग लिखकर देनी पड़ेगी। बोलनेका कोई हक न होगा, मनके भाव कागजमे लिख कर पेश करने होगे। यदि वह चाहेगा तो दिल बहलावके लिये उसे एक डबल रीड हारमोनियम भी प्रदान किया जायगा।

इन शर्तोंके अनुसार उसे दस वर्ष तक जेल जीवन व्यतीत करना पड़ेगा। जेलसे छूटनेके आध घण्टा पहले उसे मुझसे बातचीत करनी पड़ेगी और मैं उसे दो लाख रुपयेका नकद पुरस्कार दूगा।

यदि इन शर्तोंमे उसने जरा भी गड़बड़ी की, तो मुझे दो लाखकी रकम देनेका कोई हक न होगा। यदि मैं भी डाक्टर पी की शर्त न पूरी कर सका तो मुझे हर्जाना स्वरूप उन्हे पाच लाख रुपये देने पड़ेंगे।”

अटर्नी साहबने एग्रीमेण्ट पढकर डाक्टर पी को सुना दिया।

डाक्टर पी ने मुस्कुराते हुये उसपर हस्ताक्षर कर दिये। मेरी भी सही हुई और गवाहीमें अटर्नी साहबने भी अपना नाम सही कर दिया। दूसरे दिन बाकायदा रजिष्ट्री हो गयी और मैं राजी खुशी अपने घर चला आया।

( ३ )

डाक्टर पी का जेल जीवन बडी मस्तीके साथ आरम्भ हुआ। पहले

वर्ष उन्होंने वढियासे वढिया मालपुये उडाये दूध, दही रखड़ी, मलाई चाटते रहे और हारमोनियम पर कभी ठुमरी उडाते, कभी कव्वालिया। उनके गलेका स्वर इतना मीठा था कि मैं स्वय मुग्ध होकर घण्टों उनके भाव पूर्ण सङ्गीत सुना करता। किसी किसी दिन मेरी रात वड़े आनन्दसे कटती। ऐसा जान पडता मानों रात आयी ही नहीं। यदि आयी भी तो बुलबुल जैसी तराने छेड़ उड़ गयी।

दूसरे और तीसरे वर्ष डाक्टर पी की रुचि खूब वदली। उन्होंने चुन चुन कर रोमान्टिक उपन्यास पढे। प्रेम कहानियाँ पढनेमे उनका नम्बर इतना ज्यादा वढा कि पुस्तकें सप्लाई करते करते मेरे नाकमे दम आ गया। नाटक भी उन्होंने खूब हजम किये और कविताओंको दीमक वनकर चाटा।

चौथे पाचवे वर्ष उनके सिरमे देशी विदेशी भाषायें सीखनेकी सनक सवार हुई। स्पेनिश, जर्मन, फ्रेंच, जापानी तथा चायना भाषाकी पुस्तकें सप्लाई करते करते मैं ऊब गया। करता भी क्या? एग्रीमेण्टके अनुसार डाक्टर पी की शर्तें पूरी करनेके लिये वाध्य था, नहीं तो मुझे हर्जाना स्वरूप पाच लाख रुपये देने पड़ते।

छठवें और सातवें वर्ष डाक्टर पी की मानसिक अवस्था बड़ी विचित्र रही। खानेके लिये दाल रोटीके सिवाय दूसरी चीज न खाते। फल और मिठाइयोंसे उन्हे घृणा हो गयी थी। वह हारमोनियम पर गीत अलापते। दिन भर कैदखानेमे पागलकी तरह टहलते और ऊटपटाग वकते। किसी किसी समय वह खूब खिलखिला कर हँसते और बिछौने पर सिसक सिसक कर रोते रहते। कभी कभी मैंने उन्हे चुपचाप चोरोंकी तरह झाक कर देखा,—

वह रात रात भर कुछ लिखा करते हैं और न मालूम क्या सोचते रहते हैं। लेकिन प्रभात सूर्यकी किरणें फैलते ही अपने लेखोंके टुकड़े टुकडे कर हवामें उडा देते हैं। इस वर्ष उन्होंने मुझे पुस्तकें पढनेके लिये कभी तङ्ग नहीं किया और तुलसी कृत रामायणके सिवा दूसरी पुस्तक मुझसे नही मागी।'

आठवे वर्ष उनकी जीवन धारा एकदम वदल गयी। उन्होने फिलासफी, साईकोलोजी, साइन्स, इतिहास तथा जीवनचरित्रकी पुस्तके चुनचुन कर पढीं। इस साल उन्होने लगभग सात सौ पुस्तके पढ डालीं। देशी-विदेशी पुस्तकें सप्लाई करते करते मैं घवड़ा उठा। वहुत सी किताबें मुझे विदेशोसे मगा-कर देनी पडीं और मेरे तमाम रुपये पुस्तके खरीदनेमे खर्च हो गये।

नवें वर्ष गीताके अलावा मुझे कोई अन्य पुस्तक नही सप्लाई करनी पड़ी।—

दशवें वर्ष . .

( ४ )

उफ !

दसका अक देखते ही सर भन्ना उठता है, आखोंके आगे अन्धेरा छा जाता है और कलेजेको जैसे कोई मोरचा लगी हुई आरीसे धीरे धीरे काटता है।

इस वर्ष मुझे फाटकेबाजीमे कई करोडका घाटा लगा। मेरी सारी जमा जायदाद काफूरकी तरह उड़ गयी और मेरे पास जहर तक खानेके लिये एक पाई न बच रही। मैं रास्तेका फकीर हो गया। वल्कि फकीरोंसे बदतर भिखारी। दुनियामे मुझे भीख देने वाला भी कोई न था। दोस्तोंके

झुण्ड हवाकी तरह उड़ गये थे और मुझे सान्त्वनाके दो शब्द भी सुननेमे न आते थे।

आजसे दस वर्ष पहले मैं सब तरहसे सुखी था। मेरे पास रुपये अनाजकी तरह भरे थे। लेकिन आज,—!

आज मैं रास्तेका भिखारी हू! मेरा शरीर सूखकर काटा हो गया है। मैं सोचता हू,—फाटके के नशेमे चूर होने के पहले मैं मर क्यो नहीं गया? मैंने क्यों व्यर्थके लिये अपनी जिन्दगी बरबाद की? किस-लिये मैंने डाक्टर पी का जीवन नष्ट किया? इससे मुझे फायदा क्या? जनता भी क्या लाभ उठायेगी? मेरा सर्वस्व चले जानेपर भी दुनिया से फांसी और आजीवन कारावासकी सजायें न उठाई जायगी। मैं कितना मूर्ख हू। कितना पागल!

यह फालतू नाटक खेलनेके पहले मेरी लाश श्मशानमे क्यो न फूंक दी गयी? किसीने मुझे गोली क्यो न मार दी? उफ! यह ज्वाला अब नहीं सही जाती। असह्य है वेदना और अपमान।

कोई भी जवाब नहीं देता। दुनियाके प्रत्येक चलते फिरते जीव गूगे हैं। दुनियाकी हरेक वस्तु यहा तक कि रास्तेको गर्द भी मेरे लिये गूगी है। कोई भो मेरे सवालोका जवाब नहीं देता। आह!—मैं डाक्टर पी के लिये क्या करू! कल ही उन्हें दो लाख रुपयेका भुगतान देना है। इतने रुपये कहाँसे लाऊँ? मेरी इज्जत, आबरू और जिन्दगी मिट्टी मे मिल गयी।

क्या करू? ..

( ५ )

भयानक सन्नाटा था। काली और डरावनी रात मौतकी तरह चारो तरफ चक्कर काट रही थी। मैं फुट पाथसे उठकर लड़खडाता हुआ गुलजार बागकी ओर चल पड़ा।

मेरे कपड़े निहायत गन्दे थे। उनसे सड़ी दुर्गन्ध आ रही थी। इस दुर्गन्धमें फाटकेबाजीका नशा था। जीवनका नर्क उबल रहा था।

धीरे धीरे चोरकी तरह दिवाल फादकर मैंने गुलजार बागमें प्रवेश किया! और बढे हुये तेज नाखूनोंसे एक आमके दरख्तकी जड़ खोदने लगा। आध घण्टेके कठिन परिश्रमसे गढा खोदकर मैंने एक सन्दूकची निकाल बाहरकी। उसे खोला, एक चमकता हुआ पिस्तौल बरामद हुआ।

मैंने धड़कते दिलसे सोचा—इसी पिस्तौलसे पहले डाक्टर पी का खात्मा करूंगा, फिर मैं भी आत्महत्याकर मर जाऊंगा। दुनियाकी तमाम ज्वालाएं एक साथ ही वर्फकी तरह गल जायगी। न रहेगा जीवन, न उठेगी लहरें!

मैंने कांपते हाथोंसे पिस्तौल छुपा ली और शराबीकी तरह झूमते पैरोंसे उस तरफ चला, जहां डाक्टर पी कैदी जीवन व्यतीत कर रहे थे।

मैंने खिडकीसे झांककर देखा-जेलके अन्दरकी लैम्प धीमी रोशनीके साथ टिमटिमा रही है। डाक्टर पी टेबिल पर सर झुकाये बैठे हैं। औरतोंके जैसे उनके सरके लम्बे और अस्तव्यस्त बालोंसे उनका चेहरा ढका है। इधर उधर ढेरकी ढेर छोटी बड़ी पुस्तकें बिखरी हैं। किसी के पन्ने फट गये

हैं, कोई पैरोंसे रौंदी गयी हैं, कुछ मोमबत्तीसे जलाकर खाककर दी गयी है। किसी पर थूका गया है, किसी के पेज बेरहमोके साथ फाड़े गये हैं। मैं चुपचाप घण्टो यह दृश्य देखता रहा। इतने अरसेमे कैदीने न तो अङ्गड़ाई ली, न हिला डुला। वह पत्थरकी मूर्तिको तरह अटल बैठा रहा।

मैंने दो तीन बार जोर खिड़कीके किवाड थपथपाये फिर भी कैदी न सकपकाया। आश्चर्यसे मैं धीरे धीरे जेलके दरवाजेपर पहुंचा। मोहर तोड़ी और कमरसे चाभी निकालकर ताला खोला। ताला जोशोली आवाज के साथ खुल गया। जैसे दस वर्ष वाद आज उसे भी मुक्ति मिल रही हो। मेरा कलेजा कांप उठा, छाती धड़कने लगी,—शायद डाक्टर पी जेल मुक्तिकी खुशीमे मेरे पास दौड़कर चिल्लायेंगे—"मेरे दो लाख रुपये!"

लेकिन यह मेरा वहम था। कैदी वैसा ही अटल रहा। चारो तरफ सन्नाटा! साय सायकी डरावनी आवाज! मैं दबे पाव जेलके अन्दर गया।

ताज्जुव भरी निगाहो से देखा,—डाक्टर पी की मनुष्य जैसी काया ठीक है। लेकिन उनके शरीरका चमडा प्रेत की तरह सावला होकर सूख गया है। मैंने आहिस्तेसे उनका चेहरा उठाया। उन्होंने निस्तेज आखोसे मेरी तरफ देखा। उफ! उनके गाल पिचक गये थे। चेहरेमे नसें उभर आयी थीं और वह हड्डियोके कङ्काल जैसे मालूम होते थे। कैसा भयानक परिवर्तन था।

मैंने पुकारा "डाक्टर पी!"

डाक्टर पी हड्डीकी ठठरियोकी तरह उठ खड़े हुये।

मैंने भयभीत स्वरमें कहा—"डाक्टर पी ! आपका जेल जीवन समाप्त हो गया। आप भोर होनेके पहले ही मुक्तकर दिये जायगे।,,

डाक्टर पी के आखोंको रोशनी बिजलीकी तरह चमक उठी। बोले—

"ओ, तुम !"

मैंने कहा—"जी हां।"

डाक्टर बोले—"मुझे नहीं चाहिये दो लाख रुपये। मैं ईश्वरको-साक्षी देकर कहता हू,—धन-दौलय, मुक्ति, स्वास्थ्य, जोवन, मैं कुछ नहीं चाहता। तुम मनुष्य हो, तुम्हे यह चोजें अच्छी लगती हैं, किन्तु मैं उन्हे तुच्छ समझता हू।"

डाक्टर पी बोलते गये—"लगातार दस वर्षोंके जेल जोवनसे मैं जोवन धाराको समझ गया हू। सच पूछो तो जेल जोवनके पहले मैं अन्धा था। तुम्हारी पुस्तकें पढकर मैंने ससारके असलो रूपको पहचाना है। मेरी आखें खुल गयी हैं। अपने जीवन रहस्योंके साथ मेरा घनिष्ट परिचय तो अब हुआ है।

सुनो !

मैंने तुम्हारी पुस्तकें पढकर मुक्तिकी सुन्दर सडक तैयार की है। तुम्हारी पुस्तकें पढकर मैंने मीठे गीत गाये हैं। हिरनोंकी तरह मैंने विशाल वनोंमें चौकड़ियां भरी हैं। झुण्ड को झुण्ड सुन्दरियोके साथ मैंने कृष्ण बन का रास लीला की है, वीर अर्जुनकी तरह कभी दुश्मनोको पछाड़ा है। तुम्हारी ढेरकी ढेर पुस्तकोंने मेरी काया पलटकर दी। प्रभात सूर्यकी किरण बनकर मैंने कभी हिमालयकी चोटीका चुम्बन किया है, कभी मैंने चमकते

सितारेकी तरह सध्या सुन्दरीके साथ होली खेली है। तुम्हारी पुस्तकोंकी बदौलत सैकडो राजधानियों पर मैं शासनकर चुका हू। हजारों लडाइया मैंने नेपोलियनकी तरह फतेहकी है। तुम्हारी इस छोटीसी कोठरीमे बैठकर मैंने जिन्दगीके बड़े बड़े आनन्द लूटे हैं। मेरे जीवनके एक नहीं, सैकडो अत-चार हो चुके हैं।

तुम्हारी पुस्तकोंने मेरी आखे खोल दीं। सैकड़ों हजारो विद्वान लेखकों की विचित्र चिन्ता धाराओंसे मेरा जीवन जगमगा उठा है। आज मैं असा-धारण मनुष्य हू—रहस्यमय और विचित्र। मेरी ताकतोंका कौन मुकावला करेगा?

किन्तु मेरे भाई! तुच्छ है यह ससार। ससारमे जो कुछ है, वह कुछ नहीं है। जो कुछ नहीं है, वह सब कुछ है।

मूर्ख मनुष्य! आज तुम घमण्डसे छाती फुलाकर अकड रहे होगे कि मैं दुनियाका सबसे बड़ा धनी आदमी हू और डाक्टर पी के कीमती जीवनको दो लाख रुपयेसे खरीद लूगा। किन्तु ऐसे लाखों करोड़ो दो लाख अब मेरे जीवनके लिये तुच्छ हैं, तुच्छ हैं तुम्हारे दौलत भरे फदे। तुच्छ हैं तुम्हारे माया घमण्ड!

मूर्ख पशु! आज तुम सत्यको छोड़कर मिथ्या मञ्जिलके मुसाफिर हो। सौंदर्यको छोड़कर तुम अन्धकारकी उपासना कर रहे हो। यदि तुम आज आमके दरख्तमें कटहलके फल और गुलावके पेड़मे सन्तरे लगे देखो तो तुम्हे खूब आश्चर्य हो, क्यो? लेकिन याद रखो, जिस तरह तुम इन दृश्यों को देखकर आश्चर्यमे डूब जाओ, उसी तरह आज मैं भी तुम्हे अपने सामने

देखकर दङ्ग हू।' तुम मनुष्य हो, स्वर्गीय जीवन छोड़कर नर्क यातनायें पसन्द क्यों करते हो ?'

बेवकूफ इन्सान ! तुम सोचते होगे, मैं झूठ बोलता हू। उटपटाङ्ग बकता हू। किन्तु तुम जिस आनन्दकी उपासनामे आज जी रहे हो, उस आनन्दको मैं ठुकराता हूं, आजके दस वर्ष पहले दो लाख रुपयेका स्वप्न मेरे लिये स्वर्गीय आनन्द था। लेकिन आज,—आज मैं बदल गया हूं। ले जाओ अपनी दौलत, ले जाओ अपना माल खजाना। मैं उससे घृणा करता हू

तुम्हारी शर्तोंके अनुसार मेरा जेल—जीवन समाप्त हो गया। सूर्यकी किरणे जल्द पृथ्वीपर फैलेगी। प्रणाम !—मैं चलता हू।"

जेलका दरवाजा खुला था। कैदी बिजलीकी रफ्तारसे कमरेके बाहर हो गया।

कुछ भी मेरी समझमे न आया—वह जीवित डाक्टर पी थे या मुरदा। वह भूत प्रेत थे या देवता !

उस समय मेरी आंखोसे आसुओकी अविराम धारा बह रही थी। आज-से बढकर भयानक दु:खके दर्शन मैंने जीवनमे कभी नहीं किया !

( ६ )

दो वर्ष बीत गये !

आज भी मैं रास्तेमे कुत्तेकी तरह दरबदरकी ठोकरे खाता हूं। चारो तरफ कैदीको ढूंढता हू, लेकिन उसकी खाक तकका पता नहीं मिलता।

रास्तेके चलते हुये मुसाफिर मुझे देखते है, और घृणासे मुह फेरकर दूर चले जाते हैं।

मनुष्य जैसी मेरी काया है, मनुष्य जैसे हाथ पाँव। किन्तु दुनियामे मेरे साथ किसीकी भी सहानुभूति नही है। क्यो ?

कोई नहीं जानता मैं क्या हू और मैंने अपनी तथा डाक्टर पी की जिन्दगीके लिये क्या किया ?

---

# मनुष्यका न्याय

—— : . ——

प्रताप देहाती दुनिया छोड़ कर कलकत्ता भाग आया। यह एक ऐसी दुर्घटना है, जिसे सुनते ही संसारके प्रति घृणा हो जाती है और मनुष्य खूनी जानवरोंसे ज्यादा खूंखार दिखाई देने लगते हैं।

सबसे पहले मैं उस मूर्खको कोसूंगा, जिसने उसका नाम प्रताप रखा था। वह था तो प्रताप, पर उसकी दुनिया काले अन्धकारोंसे सांय-सांय कर रही थी। गरीब किसानका अनाथ बेटा, खानेको भरपेट भोजन नहीं, पहननेको कपड़े नहीं, उस पर विधवा बहिन मोतीका पालन! आज कलके इस मनहूस जमानेमें जब कि आर्थिक कठिनाइयोंके आर्तनाद हाहाकार मचा रहे हैं, देहातकी सूखी दुनियामें प्रताप और मोतीको रोटियोंके टुकड़े कहांसे मिलते? उस पर सबसे भयानक बात यह थी कि मोती दरिद्र घरमें जन्म लेकर भी अत्यन्त रूपवती थी। यानी कीचड़में सोनेका कमल खिला था। देहातके वे अपराधी मनुष्य जिनकी अन्तरात्मामें विद्याका जरा भी प्रकाश नहीं, दरिद्रता हाथ धोकर जिनके पीछे पड़ी है, जो उन्नतशील दुनियाको देखकर भड़कते हैं और हमेशा परनालेके कीड़े बने रहनेमें ही अपनेको भाग्यशाली समझते हैं, विधवा मोतीके रूप सौंदर्य पर फ़िदा थे। कुछ लोग अपनेको उस फूलका भंवरा बतलाते, कुछ उसे अपने हृदयकी रानी। प्रताप गंवार था। दरिद्र और अनाथ। पर वह मनुष्यरूपी जानवरोंके भाव सम-

झता था। उसे ऐसा जान पडता, मानों प्रत्येक मनुष्यकी आखे नर्ककी चिन-गारी उगल रही हैं। वह इस तरह फोल करता, गोया उसके गावके बाशिन्दे वह भूत प्रेत हैं—जो अन्धकारमें मनुष्यका गला घोट देते हैं। उसने अपनी मनोवैज्ञानिक कल्पनाओंसे, विधवा मोतीकी इज्जत बचानेके लिये, देहातियोंके आकर्षणको ठुकरा दिया। उनके प्रलोभनो पर थूका और एक दिन रातको मौका पाकर मोतीके साथ कलकत्ता भाग आया। वहा उसका कोई अपना न था। वह किसीकी सूरतसे परिचित न था। उसने सोचा, कलकत्ता अच्छी जगह है। हजारों लाखो आदमी वहा सुखसे कमाते खाते हैं। मैं भी कमाऊगा और मोती भी अपना वैधव्य जीवन काट देगी,—कलेजे पर पत्थर रखकर।

उसने टालीगञ्जकी वदबूदार वस्तीमे तीन रुपये महीनेकी एक टूटी झोपड़ी किराये पर ली और उसीमे भाई बहन कीड़े मकोड़ेकी तरह रहने लगे। अब उन्हें सिर्फ दो फिक्रें थीं—रोटीके टुकड़े और शातिमय जीवन।

प्रतापने जिस आदमीसे झोपडी किराये पर ली थी—वह देखनेमे भला आदमी मालूम होता था। इतना सरल और सज्जन कि प्रतापने उसे देवताके रूपमे देखा और उससे रोटीके टुकड़ोंकी प्रार्थना की। भिक्षुकके रूपमें नहीं, वल्कि मजदूरकी शक्लमे। उस आदमीने, जिसका नाम शर्मा बाबू था-प्रतापको सान्त्वना देकर कहा—"न घबराओ! मैं चटकलका मैनेजर हू। हजारो मजदूर मेरे अण्डरमे काम करते है। दो चार दिनोंमे तुम्हारा प्रवन्ध कर दूगा।"

और उसने दो दिनके अन्दर ही अपने कारखानेमे प्रतापको भर्ती कर

लिया। आठ घण्टे रोज काम करना होगा। रविवार और पर्व त्योहारोंमें छुट्टी। मासिक वेतन पन्द्रह रुपये महीने। सालमें दो वार भत्ता और तीन वर्षमें तरक्की।

प्रताप खुश हो गया। एक अपरिचित ज्योतिसे उसका मुखमण्डल जगमगा उठा। नसोंमे स्फूर्ति दौड़ गयी मोतीने कहा—"भगवान दिन-दिन तुम्हे तरक्की दें। मैं भी सूखी रोटिया खाकर भाईके साथ जिन्दगी काट दूगी।"

उनकी उजड़ी झोपडी वसन्त जैसी लहलहा उठी। उनमे आनन्दके पौधे फूलने लगे। शर्मा वावूके प्रति दोनों हृदय कृतज्ञ हो गये। दोनोंके हृदयोंसे उनके प्रति आशिर्वादका अमृत वरसने लगा।

( २ )

खुशामद भी कोई चीज है। खास कर इस जमानेमे। यदि आप किसी आफिसमे क्लर्क हैं, तो प्रोप्राइटर या मैनेजरकी खुशामदमे अपनेको समर्पित कर दीजिये। छायाकी तरह उनके पीछे घूमिये। हा मे हा मिलाते जाइये। कुछ ही दिनो वाद आपकी तरक्की हो जायगी। यही वात हर मामलेमे है। खुशामदसे मैंने कङ्गालोको धनवान होते देखा है। अशिक्षितोको विद्याका धनी पाया है। और उस आदमीको जिसके वदनसे वदवू निकला करती थी, इत्रकी हौजोंमे स्नान करते देखा है। लेकिन मेरा यह वहुत ही कडवा अनुभव है, खुशामदी आदमी वड़े खतरनाक होते है। वे अपने मालिकका सर्वनाश तो करते ही है, साथ ही उसके आसपास वैठने वाले मित्रों पर भी वर्रकी तरह हमला करते है और मौका पाते ही काट खाते है।

यही वात शर्मा वावूके लिये भी थी। उनका कारखाना किसी गुजराती लक्षाधीशका था। वह छायाकी तरह उसके पीछे लगे रहते। शर्मा वावू देखनेमे सीधे सादे और सज्जन मालूम होते। पर अन्दर ही अन्दर अपने मालिकका खून जोंक की तरह चूस रहे थे। वह जिसे नौकरी देते, उससे कुछ न कुछ जरूर ऐंठते। जो माल वेंचते, उसमे छिपे तौरसे कमीशन खाते। उनके खिलाफ मजदूरोंमे भीतर ही भीतर विद्रोहका वारूद भड़क रहा था। पर किसीमे इतनी हिम्मत न थी कि उसमे दियासलाई लगा दे। शर्मा वावूका व्यक्तित्व रोवीला था, वह जहा मजदूरोंकी तरफ एक वार घूर देते, मजदूर भीगी विल्ली वन जाते। उन्हे नौकरीसे वरखास्त कर दिये जानेका डर था। कारखानेमे कभी न घुसनेके आर्डरका वहम था। शर्मा वावूको सव तरहके अधिकार थे। या यों कहिये, वही एक तरहसे चटकलके मालिक थे और लक्षाधीश गुजराती उनके हाथोंकी कठपुतली।

प्रतापकी ड्यूटी थी, रोजाना आठ घण्टे चटकलकी वड़ी मैशीन चलाना। वह मेहनती था। उसने स्वय अपनेको मैशीन वना डाला। शर्मा वावू उससे वहुत प्रसन्न रहते। उसके साथ वातें करते तो मुस्कुरा कर। उसे काम सौंपते तो प्यारसे पीठ थपथपाकर। दिन दिन प्रतापका रङ्ग जमने लगा और कुछ ही दिनोमे वह कारखानेके समस्त मजदूरोंकी ईर्ष्याका कारण वन वैठा! प्रायः प्रत्येक मजदूर उससे जलने लगा, उसके खिलाफ आपसमें फुसफुसाने लगा। पर प्रतापको इससे क्या? वह अपना काम करता। मैशीन चलानेके अलावा न तो वह किसी तरफ ध्यान रखता, न किसीसे गप लड़ाता। शर्मा वावूने उसे समझा दिया था—"मजदूर हरामीके पिल्ले

होते हैं। इनके साथ मिल जुलकर काम करो, लेकिन हमेशा दूर रहो। नहीं तो मौका पाकर जहरीले सापकी तरह डस लेंगे।"

प्रतापको शर्मा बाबू पर विश्वास था। वह उनके हर इशारेको मानता। दूसरे उसे यह भी अनुभव था, मनुष्य खूनी जानवरोसे ज्यादा खतरनाक होते है। मजदूर भी तो मनुष्य ही है। शर्मा जैसे देवता दुनियामें एक ही दो नजर आते हैं।

एक दिन जब कारखानेसे छुट्टी हुई। चार-पाच मजदूर निम्नलिखित बातें करते रास्ता तै कर रहे थे।—

एक—"प्रताप आज कल शर्मा बाबूका दाहिना हाथ हो रहा है। जानते हो इसमे क्या भेद है ?"

दूसरेने मिनमिना कर कहा—"नहीं।"

पहला बोला—"प्रतापके पास एक सोनेको चिडिया है। शर्मा उसका शिकार करना चाहते हैं।"

तोसरा—"मेरे मुँहकी बात तुमने छीन ली। महीनोसे मुझे शक है।"

चौथा—"अजी शक क्या, सही है। आजकल जिसके पास बढिया औरत है, वह दूसरोको दिखाकर हजारो रुपये लूट सकता है।"

पहला—"तुम्हारो औरत भी तो नफीस है। क्यो नही उसे शर्माको दिखाकर धन्ना सेठ बन जाते ?"

चौथा—"मैं मारूँ सालेके मुंह पर जूता। अगर कोई मेरी औरतको बदनिगाहसे देखे, तो उसकी आखे काढ लू।"

तोसरा—"इस तरहकी कमाईसे तो मर जाना अच्छा। यह भी कोई कमाई है ?"

"ठीक कहा तुमने !"—पहला बोला—और फिर पाचो मजदूर टेढी मेढी पगडण्डी पार करते हुये सघन दरख्तोकी ओटमे अदृश्य हो गये !

( ३ )

मैं जिस दिनकी बात लिख रहा हू, उस दिन कारखानेमे प्रतापकी नाइट ड्यूटी थी। रात भर मैशीन चलाना होगा, कल दोपहरकी तूफान मेलसे पाच हजार बोरे आगरा भेजे जायगें—सरकारी आर्डर था।

यद्यपि फैक्टरी ऐक्टके अनुसार रातको कल कारखानेकी मैशीने चलाने-की सख्त मुमानियत हैं। पर पैसा जो चाहे कर सकता है। शर्मा बाबूने अधिकारियोंको घूस खिलाकर अपना गुलाम बना लिया था। रातके बारह बजे थे। कारखाना चारो तरफसे बन्द था। अन्दर छिपे और शोलखाये कमरेमें प्रताप तूफानकी तरह मैशीन चला रहा था। वह स्वय मैशीन बन गया था। इस समय उसकी जलती आखे सिवा मैशीनके कल पुर्जों और बोरोंके अलावा कुछ न देख सकती थीं। सुबह दसबजते पाच हजार बोरे तैयार कर देना है। काममे किसी तरहको त्रुटी नहीं होनी चाहिये। कुछ मजदूर थक गये, कुछ ऊघने लगे। प्रतापने ललकार कर कहा—"काम करो। आलस्यसे कम्पनीको नुकसान होगा।"

कुछ जी लगाकर काम करने लगे। कुछ बारूदकी तरह भड़क उठे। एक गुर्राया—"बडा आया है कम्पनीका नुकसान देखने। गोया हमे कुछ फिक्र ही नहीं।"

दूसरा बोला—"हम पर रोब झाड़ोगे, तो जबान खींच लूगा। पन्द्रह बरससे काम कर रहा हू, किसीने एक हर्फ न कहा। यह आये हैं आख दिखलाने।"

प्रतापने नम्रतासे समझाया—"मैं आख नहीं दिखलाता मेरा मतलब है, सुस्ती आनेसे माल न तैयार होगा। काम करो, काम करो।"

और वह मैशीनकी तरह मैशीन चलाने लगा।

जला भुना मजदूर आखे तरेरकर बोला—"काम करे मेरी बला, मैं तो आरामसे सोऊंगा। जो जी मे आये, कर लेना। जानता हू तेरी पोलें।"

धड़ाके के साथ मैशीन वन्द हो गयी और प्रताप ने उसके सामने तनकर पूछा—"क्या जानता है मेरी पोलें ?"

मजदूर बोला—"यही की तू परले सिरेका नीच है। विधवा वहिनको शर्माकी गोदमें सुलाकर आया है हमपर रङ्ग झाडने।"

"क्या कहा ?"—प्रताप भूखे शेरकी तरह सासे लेने लगा।

"मैंने जो कुछ कहा, ठीक कहा। आया है मुझे चराने। थू है तेरी कमाई पर—" और उस मजदूरने फर्शपर जोरोसे थूक दिया, फिर उसे पैरों से रगड डाला। गुस्सेसे उसका समूचा वदन काप रहा था।

प्रतापकी नसोंका खून उवलने लगा। उसकी चमकती आखें मजदूरोंको भस्मकर देना चाहती थीं।

दूसरा बोला—"शर्मसे आँखें नीची कर ले। तुझ मे हिम्मत कहा, जो हमसे वाते करे।"

प्रताप पत्थरकी मूर्तिकी तरह खड़ा था।

पहला बोला—"चुल्लू भर पानीमें डूब मर। नामर्द कहीं का। विधवा बहिनकी कमाई खाकर चला है शेखी बघारने।"

प्रताप घूमा, बिजलीकी तरह तडपा और फटाफट दरवाजे खोलता हुआ कारखानेके बाहर हो गया।

दरवानने देखा—प्रताप आंधीकी तरह घरकी ओर भागा जा रहा है।

दरवान चिल्लाया—"प्रताप ! प्रताप !!"

प्रताप उसकी आखोंसे ओझल होगया।

मजदूरोंकी भीड दरवानके आस-पास इकट्ठी हो गयी। एक धीरेसे उसके कानमे फुसफुसाया। दरवान मुस्कुरा उठा। जोरोंकी हास्य ध्वनि गूंज उठी और कारखानेका फाटक जोशीली आवाजके साथ बन्द हो गया।

( ४ )

अमावस्याका अन्धकार कुहासेका लबादा ओढे था। प्रतापकी चमकती आखें झोपडीके अन्दरका दृश्य देख रही थीं—

उसकी विधवा बहन फूटफूटकर रो रही है। वह कोनेमे सिकुड़ी हुई मिट्टीकी दीवालसे चिपक गयी है। आलेमे मिट्टीका भद्दा दीपक टिम-टिमा रहा है। शर्मा बाबू खाटपर बैठे हुए मोतीको समझा रहे हैं—"अगर तुम मेरा कहना मान लोगी, तो मैं तुम्हे सोनेसे लाद दूगा। मैं महीनोसे तुम्हारा पुजारी हू। हर दिन तुम्हारे नाम की माला जपता हू।"

प्रतापकी आखें ज्यादा तेजीसे चमकने लगीं। वह पागलकी तरह कान सटा कर उस भेड़ियेका प्रलाप सुनने लगा।

शर्मा कह रहे थे—"महीनों बाद आज मौका मिला है। मेरी इच्छा पूरी करो। यही तो मौका है, जब आशिक माशूकके गले मिलते हैं। कैसा अच्छा समय है, कितनी खूबसूरत काली रात।. परिन्दे तक नहीं बोलते। आओ और हारकी तरह गलेसे लिपट जाओ।"
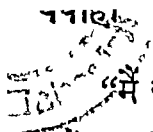
"मैं कहती हू, चुप रहो ।"—मोती आचलसे आसू पोंछते हुए बोली—"मैं आपको पिता समझती हू, देवता मानकर पूजा करती हू। शर्म आनी चाहिये आपको ।"

शर्मा बाबू खिलखिलाकर हसे और बोले—"इन फटकारोंमे कोई नयी बात नहीं है। मैं नाजनियोंके मुहसे ऐसी फटकारे हमेशासे सुनता आया हूँ। औरतें होती है बड़ी विचित्र। रोना धोना कोई तुमसे सीखले। आखें नचाकर मुस्कुरा देना यह हूरोंके सिवाय कोई जानता ही नहीं। बड़ी मायाविनी होती हो तुम, क्षणमे झिड़की, क्षणमे प्यार!"

मोती शेरनीकी तरह तड़पी—वर्तनोंके पास दाव पडा था। उठा लायी और उसे शर्मा बावूके सामने पटककर बोली—"उठा लो यह दाव और उतार लो मेरी गर्दन। मैं विधवा हूँ। मैंने आज तक पर पुरुषका मुह नहीं देखा, आपका भी न देखूगी।"

"पर मैं तो जी भरकर देखूगा।—शर्माने मदान्ध स्वरसे कहा—"और देखते देखते पागल हो जाऊगा। तुम्हारे रूपके सामने चादनी फीकी है, फूल मुरझाये हैं।"

प्रतापकी आखें सुर्ख हो गयीं।

शर्माने कहा—"यहा कौन है?—कोई होगा भी नहीं, अगर समझाने से नहीं मानोगी तो जबर्दस्ती करूँगा।"

"मैं हाथ जोड़ती हू"—मोती कसाईके सामने गौकी तरह कापती हुई बोली—"मुझे वरबाद करनेका पाप न करो। भगवानसे डरो।"

"भगवान!"—शर्मा बाबूने मूछें मरोड़कर कहा—"मैं नास्तिक हू।

भगवानको न तो आज तक देखा है, न उस नामकी पूजाकी है। भगवानसे तुम बेवकूफ औरतें डरो—जो बात बातमें धर्मको दोहाई देकर हिन्दुस्तानको काँटोमें घसीट रही है।"

मोतीमें यह फिलासफी समझनेकी बुद्धि न थी। भगवानके अपमानसे उसके रोंगटे खडे हो गये। वह भूल गयी अपने को और अपने अन्नदाता को। उसने बिजलीकी तरह कूदकर दाव उठा लिया और उसे शर्मा बाबू पर तानकर बोली—"खबरदार! यदि भगवानको कुछ कहा तो इसी दावसे टुकड़े टुकडे कर डालूंगा।"

शर्मा बाबू उठकर खड़े हो गये। मोतीको इस हरकतसे उन्हें कुछ गुस्सा भी आया। किन्तु सौंदर्यका नशा गुस्सेको पी गया। मुस्कुराकर बोले—"रहने दो यह नाजो अन्दाज, आज तुम्हें अपनी बनाकर दम लूंगा। आ जाओ मेरी भुजाओंके बीच।"

और उसने मोतीके हाथसे दाव छीनकर दूर फेंक दिया। मोती बाघिनीकी तरह तडपी। शर्माने झपट कर उसका हाथ पकड़ लिया। मोती चीख उठी। उसने दांतोंसे शर्माका हाथ काट लिया और एक ऐसी लात मारीको वह हाहाकार करते दूर जा गिरे।

मोती काँप कर भागी। शर्मा लड़खड़ाकर उठे और तूफानकी तेजी से आगे बढे। मोती ज्योंही चाहती थी, दरवाजा खोलकर बाहर भाग जाये कि शर्मा उसकी कमरसे लिपट गये। फूसकी दीवाल फट गयी और राक्षसकी तरह प्रताप कमरेमें घुस आया। उसने वज्र हाथोंसे दाव उठाया और प्रचण्ड गतिसे शर्माको अपनी ओर खींच लिया। शर्मा भयसे काँपने

प्रतापने उसके गर्दनपर दाव चलादिया सिर अलग जा गिरा, धड़ अलग !

फिर वह पागल पिशाचकी तरह मोतीपर झपटा। उसने मोतीके रूप सौंदर्यपर पचासों दाव मारे—बदनकी बोटी बोटीकर डाली। यही सौंदर्य उसे बरबाद किये था।

अब उसने एक बार अपनी तरफ देखा, एक बार अन्धेरे आकाशकी तरफ—सिवा शून्यके और कुछ न था। उसने तडाकसे अपनी खोपडीपर दाव मारा। खोपडी चूर-चूर हो गयी।

दरख्तोंपर बैठे कौए काँव काव करने लगे। शायद प्रतापकी खूनी आत्मा परिन्दोंके भी खूनकी प्यासी थी। क्योंकि उसने आज तक दुनियामें सिवा हिंसा और स्वार्थके आलावा मनुष्यका न्याय कहीं नहीं देखा था।

वहे प्रताप था और खूनी अन्धकारमें लय हो गया।

भाई बहिनकी हत्या किसनेकी ?—

मनुष्य रूपी खूंखार जानवरों ने !

---

* समाप्त *